ISSN 2454-504X | 01-15 अप्रैल, 2025 | राष्ट्रीय पाक्षिक पत्रिका | RNI No. DELHIN/2002/08663 | ₹ 15

दूसरा मत

दूसरा मत कामयाबी के 22 साल

www.doosramat.com | YOUTUBE DOOSRA MAT | जहां सच बोलते हैं शब्द

ईद में सेवइयां सौग़ात में
इलेक्शन में वोट ज़क़ात में !

तारे ज़मीं पे

A School of 21st Century

Best Day Boarding School of Bihar Award Winner - 2018

Recipient Of Educational Excellence Award - 2019

ISO 9001 : 2015

Doon Public School

(DAY BOARDING / RESIDENTIAL SCHOOL)

Affiliated to C.B.S.E, New Delhi, Affiliation No.: 330514

Ramzanpur, Begusarai, Bihar - 851129

Separate Hostel for Girls & Boys

Admission is Going On 2025-2026

Enquiry : +91 7781048957 / 7781048952

Visit us : www.doonbegusarai.in

OUR FACILITIES:

- Smart interactive well maintained classes.
- Well equipped laboratories.
- Well stocked library
- Auditorium.
- Big size play ground
- Computer Lab
- Music Room
- Language Lab
- Dance Room
- Digital Library
- Fashion Studies Lab
- Robotic (Proposed)
- Gymnasium (Proposed)
- Special training for N.T.S.E and K.V.P.Y
- Abacus Education
- Calligraphy
- Guidance and Counseling cell
- Dance classes
- Yoga/Art of Living
- Quiz
- Judo and Karate
- Horse riding (Proposed)
- Swimming pool (Proposed)
- Ideal Teacher student Ratio (15:1)
- M.I Room
- FOREIGN Language course other than English (French, Dutch)
- Children Park
- Indoor Game (Table Tennis, Billiards)
- Hobbies Clubs
- Monthly General Knowledge Test
- Excursion
- Ultra Modern Transport Facility
- Wi-Fi Campus
- Mid- Day Meal (Day Boarder)
- Handpicked subject experts
- Well Maintained mess
- Cosmopolitan environment
- Mathematics Lab

‘दूसरा मत’ प्रकाशन

‘आमने-सामने’ अपने-आप में एक ऐतिहासिक इंटरव्यू-संग्रह है। इस संग्रह में देश की 62 अहम शख़्सियतों एवं हस्तियों के साक्षात्कार शामिल हैं। यह संग्रह देश ही नहीं विदेशों में भी ख़ासा चर्चित रहा है।

देश के जाने-माने प्रकाशन ‘राजपाल’ के प्रकाशक एवं डीएवी मैनेजमेंट कमिटी के वायस प्रेसिडेंट विश्वनाथ जी ने अपने पत्र में स्पष्ट लिखा है,- “इस तरह के विशाल इंटरयू-संग्रह देश ही नहीं बल्कि विदेशों में भी अभी तक नहीं आए हैं।

आमने-सामने (मूल्य 750/)

सामना (मूल्य 1100/)

‘सामना’ भी एक महत्वपूर्ण इंटरव्यू-संग्रह के तौर पर ‘आमने-सामने’ की तरह सामने आया है। इसे भी शख़्सियतों एवं साक्षात्कार की कला को क़ुबुल करने वाले लोगों ने हाथों-हाथ लिया है। इस संग्रह में देश की विभिन्न क्षेत्रों की 82 हस्तियों की इंटरव्यू की शक्ल में लेखा-जोखा एवं उनकी हस्ती की पड़ताल है।

अपने-अपने क्षेत्र में मील का पत्थर साबित होने वाले और देश व दुनिया के सामने अपना लोहा मनवाने वाले लोगों के एक समूह विशेष इस अंक में शामिल हैं।

दूसरा मत
जहां सच बोलते हैं शब्द

RNI No. DELHIN/2002/08663

वर्ष: 24, अंक: 07

01-15 अप्रैल, 2025

संपादक
ए आर आज़ाद

संपादकीय सलाहकार
मन्तेश्वर झा (IAS R.)
(पूर्व प्रमुख सलाहकार, योजना आयोग, भारत सरकार)

प्रमुख परामर्शी एवं प्रमुख क़ानूनी सलाहकार
न्यायमूर्ति राजेन्द्र प्रसाद
(अवकाश प्राप्त न्यायधीश, पटना उच्च न्यायालय)

प्रमुख सलाहकार
जियालाल आर्य (IAS R.)
(पूर्व गृह सचिव एवं पूर्व चुनाव आयुक्त बिहार)

ब्यूरो प्रमुख
रुफी शमा

राजनीतिक संपादक
देवेंद्र कुमार प्रभात

बेगूसराय ब्यूरोचीफ
सह ब्यूरो बिहार
एस आर आज़मी

ब्यूरो ऑफिस बिहार
बजरंगबली कॉलोनी, नहर रोड,
जज साहब के मकान के सामने, फुलवारी शरीफ,
पटना, बिहार-801505

संपादकीय एवं पंजीकृत कार्यालय
81-बी, सैनिक विहार, फ़ेज़-2, मोहन गार्डेन,
उत्तम नगर, नई दिल्ली-110059
Email: doosramat@gmail.com
MOBILE. 9810757843
Whatsapp. 9643709089

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक
ए आर आज़ाद द्वारा 81-बी, सैनिक विहार, फ़ेज़-2,
मोहन गार्डेन, उत्तम नगर, नयी दिल्ली-110059 से
प्रकाशित एवं शालीमार ऑफ़सेट प्रेस, 2622, कूचा चेलान,
दरियागंज, नयी दिल्ली-110002 से मुद्रित।
संपादक-ए आर आज़ाद

पत्रिका में छपे सभी लेख, लेखकों के निजी विचार हैं, इनसे संपादक या प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं। पत्रिका में छपे लेखों के प्रति संपादक की जवाबदेही नहीं होगी।
सभी विवादों का समाधान दिल्ली की हद में आने वाली सक्षम अदालतों में ही होगा।
**उपरोक्त कुछ पद अवैतनिक हैं।*

दृष्टिकोण 10
कर्नाटक में कांग्रेस का चेहरा

प्रसंगवश 14
सबक़ लेने का यह समय

आधी आबादी 24
कामकाजी महिलाओं की चुनौतियां

जायज़ा 28
गोंडी स्कूल की बंदी का मतलब

दृष्टि 30
बिहार में अपरिहार्य हैं नीतीश

सह आवरण 32
धरती पर सुनीता की धमक

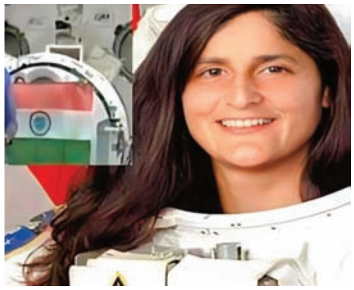

मातृत्व 52
सिजेरियन डिलिवरी

कला संस्कृति: राजस्थान का गणगौर 44
तफ़्तीश: गौरैया के बिना 48
यक्ष प्रश्न: किधर जा रही है हिंदी? 56
अध्यात्म साहित्य: प्रतिमा की पूजा 62
कविता: वीरेन्द्र नारायण झा 66
व्यंग्य: अफ़सर नामा (मुकेश असीमित) 68
कहानी: प्रेम की पोटली (अमृता पांडे) 74

वक़्फ़ पर मुसलमानों को ख़ुद की समीक्षा करनी चाहिए

आज के तथाकथित मुस्लिम रहनुमाओं को अपने गिरेबान में झांकना चाहिए। उनकी कथनी और करनी में आज इतना बड़ा अंतर लोग क्यों देख रहे हैं, इस पर भी उन्हें ग़ौर करना चाहिए। उन्हें वक़्फ़ का मतलब अगर सरकार समझा रही है, तो उसे संजीदगी से समझना चाहिए।

हर कोई जब यह मान रहा है कि आज़ादी के कुछ दिनों के बाद से ही वक़्फ़ का बेजा इस्तेमाल होने लगा है। और आज तो नौबत यहां तक पहुंच चुकी है कि वक़्फ़ के निगेहबान उसे अपनी जागीर समझने लगे हैं। और उसका ऐसे इस्तेमाल कर रहे हैं, जैसे कि उसका कोई हिसाब लेने वाला ही नहीं, उसका कोई महत्व ही नहीं है।

हर जगह वक़्फ़ की जायदाद की हिफ़ाज़त के लिए एक वक़्फ़ बोर्ड जैसी संस्था का संस्थागत रूप से इजाद किया गया। लेकिन वक़्फ़ की रक्षा करने वाले और उस रक्षक की निगरानी करने वाली संस्था वक़्फ़ बोर्ड ने भी इस तरह से उसका बेजा इस्तेमाल किया कि लोगों को यह कहने पर मजबूर होना पड़ कि देश और राज्यों का वक़्फ़ बोर्ड वह बिल्ली है, जिसे वक़्फ़ जैसे दूध की निगेहबानी की ज़िम्मेदारी सौंप दी गई है। यह सोचना लाज़मी भी है। और सौ आने सच भी है। वक़्फ़ की जायदाद का इतना बेजा इस्तेमाल हुआ लेकिन किसी आलीम या किसी मुस्लिम धार्मिक लीडर में इतनी हिम्मत नहीं हुई कि वह वक़्फ़ के ज़िम्मेदारान को कह सकें कि यह जागीर तुम्हारी नहीं, यह जागीर इस देश के अवाम की है। वक़्फ़ क़ौम की फलाह के लिए और देश के लिए किया जाता है।

ए आर आज़ाद

हुकमरान तो हुक्मरान होता है। आज जिस आम आदमी के लिए वक़्फ़ की गई ज़मीन जायदाद को उसके निगेहबान ही हड़प गए हैं। उस जायदाद और जागीर को अपने औलादों को पालने का एक ज़रिया बना लिया है। ऐसे लोगों पर अगर सरकार नकेल डालना चाहती है, तो कौन सा बुरा कर रही है? कहां से यह अत्याचार की श्रेणी में आ गया?

सरकार के कामकाज में अड़ंगा डालना इस्लाम का हिस्सा नहीं है। और विरोध तो इस्लाम का हिस्सा ही नहीं है। इस्लाम ने सुलह और बातचीत के रास्ते को अपनाने की ताक़ीद की है। इस्लाम धर्म के प्रवर्तक ने कभी भी बादशाहों की अवहेलना नहीं की। उन्होंने शासक को शासक की ही तरह समझा। उन्होंने अपने वक़्त के हुक्मरानों से विनम्रता के साथ अपनी बातें रखीं। उनसे अनुरोध किया। कोई धमकी नहीं दी। कोई तलवार नहीं तानी।

आज के तथाकथित मुस्लिम नेता और धर्मगुरु अपने पैग़म्बर के आचरण को भूल गए हैं। उनकी सुन्नतों को भूल गए हैं। वे दौलत की हवस के शिकार हो चुके हैं। और वक़्फ़ बिल का विरोध करने वाले ज़्यादातर आलीम वक़्फ़ की जायदाद और जागीर के निगेहबानों से कुछ हासिल करते रहे हैं या इसके एवज़ में उन्हें कुछ इनाम मिलने का मन में लालच है। इसलिए इस वक़्फ़ बिल पर इतना बड़ा बावेला खड़ा करने का मंसूबा बनाकर किसी भी राज्य के मुखिया और देश के बादशाह तक को निशाने पर ले रहे हैं। दरअसल जिसकी चीज़ है वक़्फ़ वह सबके सब ख़ामोश हैं। यानी देश की आम अवाम ख़ामोश है। वक़्फ़ की जायदाद और जागीर तो आम आदमी की है। आम आदमी के इस हक़ को तथाकथित धर्मगुरूओं ने वक़्फ़ के निगेहबान और सरकारी निगेहबान यानी वक़्फ़ बोर्ड के साथ मिलकर और घालमेल कर ख़ूब ग़रीबों के हक़ को पामाल किया है। उसके जज़्बात को अपने पैरों तले कुचला है। उसकी ग़रीबी के साथ धोखा किया है। जिस ग़रीबों को आगे बढ़ाने के लिए बुज़ुर्गों ने अपनी जागीर सौंपी थी, उसके सपनों को चकनाचूर किया है।

अभी भी समय है। हर ज़िला, क़स्बा, सूबे और देश की वक़्फ़ की जायदादों को आम किया जाए। इसकी जानकारी हर ग़रीबों को होनी चाहिए। उससे होने वाले इन्कम की जानकारी हर महीने मस्जिद के ज़रिए लोगों तक पहुंचनी चाहिए। और स्कूल, कॉलेज और रोज़गार सेंटर खोले जाने चाहिए, ताकि आज का मुसलमान भी देश की मुख्यधारा से जुड़ सके। देश के मुसलमानों को इस हद तक बुरे हालात पर लाने का श्रेय सरकार से ज़्यादा वक़्फ़ के निगेहबानों को जाता है। उन्हें जितना वक़्फ़ को लूटना था, उन्होंने उसका भरपूर दोहन किया है। लेकिन उन्हें या तो अपनी ज़िम्मेदारी से हट जाना चाहिए, या समाज के उत्थान के लिए वक़्फ़ की जायदाद को समाज के हित में ख़र्च करने का इंसाफ़ के साथ इरादा अब बना लेना चाहिए।

ज़ाहिर सी बात है कि जब हूकूमत को लगा कि वक़्फ़ संसाधनों का दुरूपयोग हो रहा है, तो सरकार ने देश हित में इस पर अंकुश लगाने का मन मनाया। मोदी सरकार ने वक़्फ़ की जायदाद के बेजा इस्तेमाल पर अंकुश लगाने का अगर इरादा बनाया है, तो मुसलमानों को बढ़-चढ़कर सरकार का साथ देना चाहिए। वक़्फ़ की संपत्ति पर सांप की तरह फन फैलाकर बैठने वाले समाज के इस ज़हरीले जानवर का फन कुचल देना चाहिए। और समाज और इस्लाम के अनुरूप मुसलमानों का हक़ ग़रीबों और मिसकिनों तक इंसाफ़ के साथ पहुंचना चाहिए। जब मुसलमान इंसाफ़ करने के लायक़ ही नहीं रह गया है, तो फिर कोई न कोई तो आगे बढ़कर इंसाफ़ करेगा। कोई भी निज़ाम मुसलमानों के ईमानदार होने की बाट कब तक जोहता रहेगा? इसलिए सरकार के इस बिल का विरोध के बजाए ठंडे दिमाग़ से सोचना होगा कि सरकार इस वक़्फ़ की जायदादों को किस तरह से इस्तेमला करती है। और इसका फायदा किस तरह से ग़रीबों और मिसकिनों तक कितना इंसाफ़ के साथ पहुंचता है? किसी को भी एक मौक़ा देने में हर्ज क्या है? सरकार से उम्मीद की जानी चाहिए कि इस मामले में सरकार ग़रीबों के साथ नाइंसाफ़ी नहीं करेगी। और वक़्फ़ की जायदादों का इस तरह से इस्तेमाल करेगी ताकि देश के मुसलमान राष्ट्र की मुख्यधारा से जुड़कर देश और समाज के नव-निर्माण में अग्रणी भूमिका निभाने के क़ाबिल बन सकें। जय हिन्द! जय भारत!

संवाद की पहल

गुरबचन जगत
स्तंभकार

इस सदी के पहले डेढ़ दशक के दौरान मुझे दक्षिण और उत्तर-पूर्वी भारत का व्यापक दौरा करने का अवसर मिला था। इससे पहले, जम्मू-कश्मीर में उथल-पुथल भरे कुछ वर्षों के दौरान वहां रहने का भी मौका मिला था और बेशक पंजाब तो मेरा गृह राज्य है ही और यही वह सूबा है जहां पर 1966 में बतौर आईपीएस मेरी सेवाएं शुरू हुई थीं। यह इस महान राष्ट्र में मेरे दायरे की विहंगम दृश्यावली है और अकसर मैं इसकी विशालता पर विस्मित हुआ करता हूं। लगभग पांच दशकों की सरकारी सेवा के दौरान देश के विभिन्न हिस्सों में दौरा-निरीक्षण, लोगों से हुआ मेल-जोल 'विविधता में एकता' के पुराने सिद्धांत को समृद्ध परिप्रेक्ष्य प्रदान करता है।

हमारे पूर्वजों की बुद्धिमत्ता और संविधान के अनुच्छेद 15 में अंतर्निहित सिद्धांत की बदौलत हमारे राष्ट्र को मिले संतुलन का मैं गवाह हूं। पुलिस में अपने कार्यकाल के दौरान मैंने यह उस तबाही को भी देखा है जो निहित स्वार्थों द्वारा पुरानी विभाजन रेखाओं को उभारने से बन सकती है। इन दिनों राष्ट्रीय मीडिया पर दक्षिण भारत की हलचल की खबरें खूब छाई हुई हैं और राजनीतिक, प्रशासनिक और सामाजिक गलियारों में भी यह गर्मागर्म बहस का विषय है। इस विवाद की हालिया वजह 2026 में होने वाली नई जनगणना के आधार पर लोकसभा निर्वाचन क्षेत्रों का अपेक्षित परिसीमन है। अन्य कारकों में समान नागरिक संहिता, नई शिक्षा नीति का क्रियान्वयन, हिंदी थोपने की आशंका, संघीय ढांचे को कथित रूप से कमजोर करना और केंद्र सरकार से राज्यों को अपर्याप्त धन का प्रवाह है।

दक्षिणी राज्यों को लगता है, और शायद यह सही भी है, समग्र विकास सूचकांकों में वे मध्य और उत्तर भारत के राज्यों की तुलना में कहीं अधिक आगे हैं, विशेष रूप से आईटी क्षेत्र, विनिर्माण, फार्मास्यूटिकल्स, मानव संसाधन विकास, उच्च तकनीकी और स्कूली शिक्षा में। उनकी एक बड़ी संख्या अनिवासी भारतीयों की भी है, जो विदेशों से राष्ट्रीय कोष में अरबों डॉलर जोड़ते हैं। दक्षिण भारत का समुद्री मार्ग से खाड़ी एवं अन्य देशों के साथ व्यापार का समृद्ध इतिहास रहा है, जो उन्हें व्यापार और विस्तारित परिवारों के माध्यम से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आपस में काफी जोड़कर रखता है। आज बंगलुरु, हैदराबाद, चेन्नई अग्रणी ग्लोबल कैपेसिटी सेंटर्स हैं, और उन्हें अपने यहां बड़ी संख्या में कामगार प्रवासी समुदाय और सफेदपोश नौकरियां मुहैया करवाने पर गर्व है। उन्हें डर यह है कि आगामी परिसीमन उनके राजनीतिक और वित्तीय भविष्य की जड़ों को काट देगा। शिक्षा ने दक्षिण भारत को परिवार नियोजन के लाभों से जागरूक किया और उन्होंने आबादी नियंत्रण में काफी सफलता भी प्राप्त की है।

यदि परिसीमन की वर्तमान प्रक्रिया को अंजाम दे दिया जाता है तो संसद में वहां से आने वाली कुल सीटों का प्रतिशत घट जाएगा और इसके मुख्य लाभार्थी यूपी, बिहार, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र होंगे। इन दिनों इस विषय पर खुलकर कहा जा रहा, लेकिन जब मैं दक्षिण भारत में कुछ बैठकों में भाग लेने जाता था तब नौकरशाही के स्तर पर इस मामले पर बात दबी आवाज में की जाती थी। उनका डर यह था कि शिक्षा, नियंत्रित जनसंख्या, बेहतर संस्थागत और शैक्षिक बुनियादी ढांचा और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अधिक योगदान के बावजूद, संख्या के आधार से वे कभी राजनीतिक रूप से महत्त्वपूर्ण स्थिति में नहीं रह पाएंगे। यह बात बिना लाग-लपेट कही जाती थी, बाकी आप पर छोड़ दिया जाता था कि अपने निष्कर्ष खुद निकालें। केन्द्र के साथ खुले संवाद के अभाव में, धीरे-धीरे राजनेता सार्वजनिक मंचों पर आकर अब वह सब कहने लगे हैं, जो पहले अनकहा रहा। उन्हें परिसीमन नहीं चाहिए, वे समान नागरिक संहिता नहीं चाहते, वे नहीं चाहते कि हिन्दी उनपर थोपी जाए, बल्कि वे केंद्र से ज्यादा धन और राष्ट्रीय राजनीतिक मंच पर अधिक हैसियत चाहते हैं। बड़ा सवाल यह है कि क्या कोई उनसे इस सिलसिले में वार्ता कर रहा है? यह सरकार का कर्तव्य होता है कि संभावित समस्या का पूर्वानुमान लगाए और सुनिश्चित करे कि पुराने और नए विवादों की बारीक दरारें चौड़ी खाई में परिवर्तित न होने पाएं। हमें नहीं भूलना चाहिए

कि क्षेत्रीय राजनीति पर द्रविड़ आंदोलन का हमेशा से तगड़ा साया रहा है और डीएमके, एआईएडीएमके और एमडीएमके, सभी इसी आंदोलन की उपज हैं।

फिलहाल पांच प्रमुख दक्षिणी राज्य (तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक, तेलंगाना और आंध्र) के पास संसद की कुल 543 सीटों में से 129 सीटें हैं, जो कुल राष्ट्रीय वोटर संख्या के महज 23.7 फीसदी का प्रतिनिधित्व करती हैं। जबकि इसकी तुलना में, चार उत्तरी सूबे (यूपी, बिहार, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश) जनगणना के हिसाब से सबसे अधिक लाभ ले रहे हैं। उनके पास 543 में से 197 सीटों का प्रतिनिधित्व है, यानी उनके पास संसद में पहले से ही 36.2 फीसदी वोट शेयर है, शेष बची सीटें 27 अन्य राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के बीच बंटी हुई हैं। अगर आप दक्षिण भारत से हैं, जिसका सामना पहले ही अधिक दबदबे वाले उत्तर भारत से है और वह और अधिक प्रभुत्त्व बनाने की ओर अग्रसर है, तो आपको अपनी हैसियत खोने का डर जायज है। एक बात जो मैं समझ नहीं पाया, वो यह कि उच्चतम स्तर पर कोई गंभीर बातचीत क्यों नहीं चली। पारिवारिक विवादों से लेकर राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय विवादों तक में, सदा संवाद ही समाधान का रास्ता रहा है। यह बातचीत किसी समस्या के आरंभिक लक्षण बनते ही या पैदा होने के बाद, कभी हो सकती है, फिर वार्ता करने में झिझक क्यों? बातचीत कमजोरी की निशानी न होकर समस्याएं सुलझाने की इच्छाशक्ति होती है और संवाद शुरू करने के लिए सबसे बढ़िया है कि बात सीधे संबंधित पक्ष से की जाए। सरकार उच्च स्तरीय प्रतिनिधियों के जरिये संबंधित राज्यों से बात करे, बातचीत खुलकर हो। दिमाग खुला रखकर कठिन से कठिन समस्याओं का समाधान संभव है।

यही बात पूर्वोत्तर पर भी लागू है। यह वो इलाका है, जहां पर सहमति और मतभेद हमेशा एक साथ मौजूद रहे हैं, वहां के मुद्दों पर राष्ट्रीय मीडिया और राजनेता आमतौर पर गायब रहते हैं। यहां मुख्य भूमि पर वहां के बारे में जो कुछ सुनते हैं, वह वहां जमीनी हकीकत पर ठीक उलट दिखाई देता है। समझौते की आड़ में नगालैंड पर कभी भूमिगत रहे तत्त्वों का राज दशकों से चला हुआ है, दीमापुर उनका गढ़ है, एक तरह से राजधानी। वे जब चाहें, जहां चाहें, नाकाबंदी कर देते हैं या उठा लेते हैं। केंद्र सरकार की मर्जी के खिलाफ मिजोरम म्यांमार से आने वाले लोगों को शरण दे रहा है और उनके लिए तथा मणिपुर के बेदखल हुए आदिवासियों के लिए सहायता शिविर स्थापित किए हैं। म्यांमार से लगती मणिपुर और मिजोरम की सीमा लगभग खुली है। मणिपुर त्रासदी जब से शुरू हुई है, कई लोगों की जान चली गई, और इससे कई गुना लोग बेघर हुए हैं और विभिन्न कबीलों के हथियारबंद गिरोह अपने-अपने इलाके में शासन चला रहे हैं। वे जब चाहें लूटपाट, बलात्कार और हत्या कर देते हैं, पुलिस शस्त्रागारों से बड़े पैमाने पर हथियारों की लूट हुई है। विभिन्न जनजातियों के सभी प्रमुखों के साथ वृहद बातचीत क्यों नदारद है? क्या केवल फौजी ताकत का प्रयोग ही समाधान है? देश के लिए पुरानी चिंता का अन्य स्रोत पंजाब और जम्मू-कश्मीर राज्य हैं। कुछ समय राहत के बाद वहां फिर से सरगर्मियां बढ़ी हैं। यह उस ज्वालामुखी की भांति है, जो सतह के नीचे धधकता रहता है और एक दिन अचानक फट जाता है। हालांकि, ज्वालामुखी के विपरीत, उपरोक्त वर्णित क्षेत्रों में हम शांति लाने के लिए कदम उठा सकते हैं।

केंद्र एवं राज्य सरकारों को संसद, राज्यों की विधानसभाओं और लोगों से बात करनी चाहिए। लोगों को विश्वास में लिया जाना चाहिए, शांति में हम सभी का हित है। पंजाब और जम्मू-कश्मीर, दोनों राज्यों में फिर से सरगर्मी बढ़ने लगी है और ऐसा लगता है कि सीमा पार के हमारे पड़ोसी एक बार फिर से आग भड़काने में लगे हैं। रोजाना गंभीर घटनाएं हो रही हैं और सरकार से हमें केवल लफ्फाजी सुनने को मिल रही है। धर्म और राजनीति का घालमेल एक घातक मिश्रण है, जैसा कि हम विगत में देख चुके हैं। ऐसी घटनाओं को दबायाा नहीं जा सकता। राजनीतिक दलों को स्वार्थ साधना बंद करना होगा और सरकार को अपनी इच्छाशक्ति और प्रशासन को अपना संकल्प दिखाना चाहिए झ यदि अभी नहीं, तो कब?

(लेखक मणिपुर के राज्यपाल एवं जम्मू-कश्मीर में पुलिस महानिदेशक रहे हैं।)

बलदेव राज भारतीय
वरिष्ठ स्तंभकार

भाषा विवाद और राजनैतिक रोटियां

क्या आप बता सकते हैं कि आप किस भाषा में हंसते हैं या किस भाषा में रोते हैं? मनुष्य की ये भावनाएं समस्त पृथ्वी पर एक ही तरह व्यक्त की जाती हैं। आप जिस भाषा को नहीं भी समझते परन्तु सामने वाले मनुष्य को हंसता हुआ या रोता हुआ देखकर आप सहज ही अनुमान लगा सकते हैं कि उस समय उसकी मनोदशा कैसी है। प्राकृतिक रूप से मनुष्य की इन भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए किसी भाषा की आवश्यकता नहीं पड़ती। परन्तु सभी भावनाएं ऐसी नहीं होती कि उन्हें चेहरे के भावों द्वारा व्यक्त किया जा सके। इसीलिए हमें किसी विशिष्ट भाषा की आवश्यकता पड़ती है।

भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम है। यह वह साधन है जिसके द्वारा हम बोलकर या लिखकर अपने विचार प्रकट कर सकते हैं। दूसरों के समक्ष अपनी भावनाएं प्रकट कर सकते हैं तथा दूसरों की भावनाओं को समझ सकते हैं। भाषा केवल संवाद का साधन नहीं है, बल्कि यह हमारी संस्कृति, परंपरा और समाज के मूल्यों का भी प्रतिबिंब होती है। यह न केवल हमारे अस्तित्व को परिभाषित करती है, बल्कि हमें समाज से जोड़ने का कार्य भी करती है। विभिन्न भाषाओं का ज्ञान व्यक्ति की विद्वता को दशार्ता है, और इसे एक महान उपलब्धि माना जाता है।

हर भाषा का अपना सौंदर्य होता है, जो उसके बोलने वालों और उसे समझने वालों के व्यवहार में झलकता है। किसी भाषा का ज्ञान होना गर्व की बात होती है। जो व्यक्ति जितनी अधिक भाषाओं का ज्ञान रखता है, वह उतना ही बड़ा विद्वान माना जाता है। लेकिन जब भाषा को विवाद या टकराव का माध्यम बना दिया जाता है, तो यह चिंताजनक हो जाता है। भाषा का उद्देश्य लोगों को जोड़ना होता है, न कि उन्हें अलग करना।

फिर वह कौन सा कारण है, जिसके लिए भाषा को विवाद या झगड़े का माध्यम बनाया जा रहा है। तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एम.के. स्टालिन ने हिंदी भाषा को लेकर जो विवाद खड़ा किया, वह इसी राजनीति का एक और उदाहरण है। यह प्रश्न उठता है कि क्या वास्तव में यह विवाद तमिल भाषा के सम्मान की रक्षा के लिए है, या फिर इसके पीछे कोई और उद्देश्य छिपा है? क्यों व्यर्थ में भाषा विवाद को हवा देकर वे अपनी राजनैतिक रोटियां सेंकने का काम कर रहे हैं? आखिर इससे वे क्या हासिल करना चाहते हैं?

हर भाषा अपनी संस्कृति, परंपराओं और पहचान को संजोए रखती है। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में भाषाई विविधता हमारी ताकत है। देश में 22 अनुसूचित भाषाएँ हैं और सैकड़ों अन्य भाषाएँ और बोलियाँ प्रचलित हैं। हिंदी देश की राजभाषा है, लेकिन यह किसी भी अन्य भाषा के अस्तित्व को खतरे में डालने के लिए नहीं बनी है। संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया, लेकिन इसके साथ-साथ यह भी प्रावधान किया गया कि राज्यों को अपनी क्षेत्रीय भाषाओं को संरक्षित और विकसित करने की पूरी स्वतंत्रता होगी। ऐसे में जब हिंदी भाषा को जबरन किसी पर थोपने की बात की जाती है, तो यह एक मिथक ही प्रतीत होता है। सरकारें बार-बार यह स्पष्ट कर चुकी हैं कि हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में लागू करने की कोई मंशा नहीं है। इसके बावजूद, तमिलनाडु के मुख्यमंत्री का बार-बार हिंदी के विरोध में बयान देना केवल राजनीतिक एजेंडे का हिस्सा लगता है।

भारत में भाषाई विवाद कोई नई बात नहीं है। 1960 के दशक में जब हिंदी को राजभाषा बनाने का प्रयास किया गया, तब दक्षिण भारत, विशेषकर तमिलनाडु में इसका भारी विरोध हुआ। यह विरोध इतना तीव्र था कि इसने द्रविड़ राजनीति को एक नई दिशा दी। द्रविड़ मुनेत्र कड़गम (डीएमके) जैसी पार्टियों ने इस मुद्दे को भुनाकर अपनी राजनीतिक जड़ें मजबूत कीं।

आज भी यही रणनीति अपनाई जा रही है। तमिलनाडु में हिंदी विरोध का मुद्दा एक भावनात्मक विषय बना दिया गया है। एम.के. स्टालिन इसे समय-समय पर उछालकर अपनी राजनीतिक स्थिति को मजबूत करना चाहते हैं। वे हिंदी भाषा के प्रसार को तमिल संस्कृति के लिए खतरा बताकर राज्य के लोगों की भावनाओं

को भड़काते हैं, जिससे उनकी पार्टी को राजनीतिक लाभ मिलता है।

एम.के. स्टालिन और उनकी पार्टी का आरोप है कि केंद्र सरकार हिंदी को जबरन थोपने का प्रयास कर रही है। लेकिन वास्तविकता इससे काफी अलग है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में त्रिभाषा सूत्र की बात कही गई है, जिसका अर्थ है कि छात्रों को कम से कम तीन भाषाएँ सीखने का अवसर मिलना चाहिए। इसमें किसी भी भाषा को अनिवार्य नहीं किया गया है। राज्यों को पूरी स्वतंत्रता दी गई है कि वे अपनी क्षेत्रीय भाषा को प्राथमिकता दें।

संघ लोक सेवा आयोग परीक्षाएं अंग्रेजी और हिंदी दोनों में उपलब्ध हैं, और हाल के वर्षों में क्षेत्रीय भाषाओं में भी इनका विस्तार हुआ है। संविधान के अनुसार कोई भी भारतीय नागरिक अपनी पसंद की भाषा में संवाद कर सकता है। हिंदी केवल राजभाषा है, न कि राष्ट्रीय भाषा। ऐसे में यह दावा करना कि हिंदी को जबरन थोपा जा रहा है, वास्तविकता से परे लगता है।

तमिल एक अत्यंत समृद्ध और प्राचीन भाषा है। यह दुनिया की सबसे पुरानी जीवित भाषाओं में से एक मानी जाती है और इसे शास्त्रीय भाषा का दर्जा भी प्राप्त है। तमिल साहित्य, संस्कृति और इतिहास अत्यंत गौरवशाली हैं। तमिल भाषा की मजबूत स्थिति को देखते हुए यह कहना कि हिंदी के कारण इसका अस्तित्व खतरे में है, एक अनुचित भय पैदा करने जैसा है।

आज की दुनिया में बहुभाषावाद एक ताकत है। जो व्यक्ति जितनी अधिक भाषाओं का ज्ञान रखता है, उसकी ज्ञान की सीमा उतनी ही विस्तृत होती है। तमिल भाषियों को हिंदी या अन्य भाषाएँ सीखने से परहेज नहीं करना चाहिए, क्योंकि यह उनके व्यक्तिगत और व्यावसायिक विकास में सहायक होगा।

जब दुनिया वैश्वीकरण की ओर बढ़ रही है, तब भारत में भाषा के नाम पर विभाजन दुर्भाग्यपूर्ण है। हमें यह समझना होगा कि कोई भी भाषा दूसरी भाषा की दुश्मन नहीं होती। भाषाएँ एक-दूसरे को समृद्ध करती हैं। हिंदी का विरोध करने से तमिलनाडु को क्या लाभ मिलेगा? क्या इससे राज्य की प्रगति तेज होगी? क्या इससे बेरोजगारी कम होगी? क्या इससे आर्थिक स्थिति सुधरेगी? उत्तर स्पष्ट है–नहीं। यह केवल एक भावनात्मक मुद्दा है, जिसका राजनीतिक लाभ उठाया जा रहा है।

भाषा विवाद का समाधान टकराव में नहीं, बल्कि समावेशी दृष्टिकोण अपनाने में है। छात्रों को अपनी मातृभाषा में पढ़ने का अवसर मिलना चाहिए, लेकिन उन्हें अन्य भारतीय भाषाओं का भी ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

केंद्र और राज्य सरकारों को भाषा के मुद्दे पर टकराव की बजाय संवाद और सहयोग का रास्ता अपनाना चाहिए। भाषा को राजनीति से अलग रखना होगा। इसे केवल चुनावी लाभ का साधन नहीं बनने देना चाहिए।

भारत की ताकत उसकी विविधता में है, और भाषाई विविधता इसका महत्वपूर्ण हिस्सा है। हिंदी हो या तमिल, दोनों ही भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर हैं। किसी भी भाषा का विरोध करना, उसे खतरा बताना या उसके खिलाफ आंदोलन करना देश की एकता और अखंडता के लिए उचित नहीं है।

एम.के. स्टालिन जैसे नेता यदि वास्तव में तमिलनाडु की प्रगति चाहते हैं, तो उन्हें भाषा विवाद से ऊपर उठकर विकास के मुद्दों पर ध्यान देना चाहिए। शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, और आर्थिक सुधार जैसे विषय अधिक महत्वपूर्ण हैं। भाषा को विवाद का नहीं, बल्कि सेतु का माध्यम बनाना चाहिए ताकि भारत और अधिक सशक्त हो सके।

कर्नाटक में कांग्रेस का चेहरा

प्रभुनाथ शुक्ल
वरिष्ठ स्तंभकार

कर्नाटक की सिद्धारमैया सरकार ठेकेदारी में मुस्लिम आरक्षण का बिल आखिरकार शोर शराबे और हंगामे के बाद में राज्य विधानसभा में पारित कर दिया। मुख्य विपक्षी भाजपा के कड़े विरोध के बाद भी सरकार अपने फैसले और हौसले पर अडिग दिखी। सरकार ने निर्माण क्षेत्र में मुस्लिम ठेकेदारों के लिए चार फीसदी आरक्षण लागू करने का फैसला किया है। इसके लिए कर्नाटक ट्रांसपेरेंसी इन पब्लिक प्रोक्योरमेंट यानी केटीपीपी अधिनियम में संशोधन की गई है।

यह प्रस्ताव सबसे पहले 2024 में चर्चा में आया, जब सिद्धारमैया सरकार ने मुस्लिम समुदाय को ठेकेदारी में आरक्षण देने की संभावना पर विचार शुरू किया। मार्च, 2025 में बजट पेश करते समय मुख्यमंत्री सिद्धारमैया ने इसकी आधिकारिक घोषणा किया था। सरकार का दावा है कि इस तरह के आरक्षण से सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़े समुदायों को सशक्त करने और समावेशी विकास को बढ़ावा मिलेगा जबकि सरकार की असली मंशा मुस्लिम वोटरों पर है। फिलहाल भजपा बिल के खिलाफ अदालत का रुख करेगी या आंदोलन के जरिए हिन्दुओं का ध्रुवीकरण करेगी, यह वक़्त बताएगा।

सरकार इस कानून के जरिए मुस्लिम मतों का ध्रुवीकरण करना चाहती है। फिलहाल आम

दूसरा मत

नवरात्र की हार्दिक शुभकामनाएं

पढ़ें और पढ़ाएं दूसरा मत

एक शुभचिंतक, दिल्ली

गरीब मुसलमानों को इस कानून से कोई लाभ मिलने वाला नहीं है। क्योंकि किसी भी सरकारी टेंडर लेने के लिए अच्छी खासी पूंजी होनी चाहिए। सरकार इस तरह का कानून लाकर एक तीर से कई निशाना साधना चाहती है। कांग्रेस को लेकर वह मुसलमानों में एक सहानुभूति पैदा करना चाहती है। दूसरी तरफ सरकार के बेहद करीबी संबंध रखने वाले दौलतमंद मुस्लिमों को बेहतर मौका देना चाहती है। मुस्लिम मतों को हमेशा अपने पाले में रखने के लिए यह तुष्टिकरण की सबसे उम्दा नीति है। जबकि यह संविधान विरोधी है।

राज्य में मुख्य विपक्षी दल भारतीय जनता पार्टी ने इसे संविधान के खिलाफ बताते हुए अदालत में जाने का फैसला किया है। भजपा का आरोप है कि संविधान में धर्म आधारित आरक्षण का विकल्प नहीं है। धार्मिक आधार पर आरक्षण दिए जाने का खुद बाबा साहब भीम राव आम्बेडकर ने विरोध किया था। आगरा में बौद्ध धर्म ग्रहण करने के बाद उन्होंने खुद कहा था कि धर्म परिवर्तन के बाद हमें अब आरक्षण का लाभ नहीं मिलेगा।

भारतीय जनता पार्टी ने इसे कांग्रेस की तुष्टिकरण की राजनीति करार दिया है और दावा किया है कि यह संविधान के खिलाफ है, क्योंकि भारत का संविधान धर्म के आधार पर आरक्षण की अनुमति नहीं देता। भाजपा नेता रविशंकर प्रसाद और तेजस्वी सूर्या ने इसे असंवैधानिक और वोट-बैंक की रणनीति बताते हुए इसे दलित और पिछड़े वर्ग के हितों के खिलाफ बताया है। जबकि राज्य के उपमुख्यमंत्री डीके शिवकुमार ने साफ किया है कि यह आरक्षण केवल मुस्लिमों के लिए नहीं, बल्कि सभी अल्पसंख्यक और पिछड़े समुदायों के लिए है, हालांकि विवाद मुख्य रूप से मुस्लिम कोटा पर केंद्रित है। क्योंकि हमारे संविधान में धार्मिक आधार पर आरक्षण का कोई प्राविधान नहीं है।

कर्नाटक के मुख्यमंत्री सिद्धारमैया इसे राज्य के सभी अल्पसंख्यक समुदाय ईसाई, जैन, सिख के लिए बेहतर बताया है, लेकिन मूल विवाद धार्मिक आधार को लेकर है क्योंकि सरकार सभी अल्पसंख्यकों की बात भले करती हो लेकिन उसकी सोच में सिर्फ मुस्लिम हैं क्योंकि राज्य में तकरीबन 13 फीसदी मुस्लिमों की आबादी है। सामाजिक संगठनों ने इस आरक्षण पर गंभीर चिंता जताते हुए कहा है कि इससे सामाजिक ध्रुवीकरण बढ़ सकता है। जबकि राज्य के मुसलमानों को ओबीसी श्रेणी के तहत आरक्षण का लाभ 1970 के दशक से मिल रहा है। कर्नाटक की राजनीति में अब यह बड़ा मुद्दा बन गया है जिसमें सामाजिक न्याय, संवैधानिकता, और वोट-बैंक की लड़ाई आमाने -सामने हो गईं है।

कांग्रेस के लिए अहम सवाल यह है कि राहुल गांधी देश भर में संविधान की किताब लेकर घूमते हैं। लोकसभा चुनाव में उन्होंने संविधान बचाओ का नारा दिया था। फिर कर्नाटक में उन्हें संविधान की लुटिया डूबती क्यों नहीं दिखती। वहां भी तो कांग्रेस सरकार है। फिर मुसलमानों के वोट के लिए दोहरे चरित्र की राजनीति कहाँ तक जायज है। हिन्दुओं की उपेक्षा

और मुसलमनों को सिर आँखों पर बिठाने की राजनीति कांग्रेस को ले डूबी। वैसे राहुल गांधी और कांग्रेस से कोई उम्मीद नहीं की जा सकती है। क्योंकि साल 2012 में उन्होंने खुद मुस्लिम आरक्षण की वकालत किया था। देश में मुसलमानों को खुश करने के लिए कांग्रेस जिस तरह की राजनीति कर रहीं है उससे फिरहाल उम्मीद भी नहीं दिखती कि वह दिल्ली की राजनीति में वापसी करेगी।

तुष्टिकरण की राजनीति ने कांग्रेस को कहीं का नहीं छोड़ा। महागठबंधन बनाने के बाद भी कांग्रेस को कुछ हासिल नहीं हुआ। यह दीगर बात है कि लोकसभा में उसकी सीटें अधिक आयीं लेकिन यह गठबंधन की वजह से हुआ। कर्नाटक में संविधान के खिलाफ धर्म के आधार पर मुस्लिम ठीकेदारों को सरकारी कामकाज में चार फीसदी आरक्षण का बिल पास हो गया लेकिन राहुल गांधी एक शब्द नहीं बोला। इस तरह की राजनीति कांग्रेस के पतन का एक और इतिहास लिखेगी। अगर धर्म के आधार पर धार्मिक अल्पसंख्यकों को सरकारी कामकाज में आरक्षण दिया जा रहा है तो हिन्दुओं को क्यों नहीं। कल दूसरे समुदाय के लोग भी इस तरह के आरक्षण की मांग करेंगे।

बेगम एजाज रसूल ने संविधान सभा में धर्म के आधार पर मुस्लिम आरक्षण पर तीखा विरोध किया था। वह अकेली महिला थीं, जिन्होंने इसका खुलकर विरोध किया। उन्होंने कहा था इस तरह के आरक्षण से मुसलमान, बहुसंख्यक समाज का विश्वास खो देगा। इसलिए ऐसे आरक्षण की कोई जरूरत नहीं है। यह आत्मघाती होगा और बहुसंख्यकों से अलग कर देगा लेकिन आज हिंदू समाज के कथित हिमायती मुस्लिम आरक्षण की माला जप रहे हैं। तेलंगाना के मुख्यमंत्री ए रेवंत रेड्डी ने बीते साल मार्च में शिक्षा और रोजगार में मुसलमानों के लिए चार फीसदी आरक्षण की वकालत किया था। साल 2014 में महाराष्ट्र की तत्कालीन कॉंग्रेस सरकार ने शिक्षा और नौकरी में पांच फीसदी आरक्षण का अध्यादेश पारित किया था।

देश के पूर्व प्रधानमंत्री रहे मनमोहन सिंह ने अपने एक बयान में कहा था कि देश के संसाधनों पर पहला हक मुसलमानों का है। कर्नाटक की सिद्धारमैया सरकार तो मुसलमानों पर मेहरबान है। राज्य के बजट में अल्पसंख्यकों के विकास के लिए एक हजार करोड़ का विशेष प्राविधान किया है। वफ़्फ सम्पति की सुरक्षा और रख रखाव के लिए 150 करोड़ आवंटित किए गए हैं। उर्दू स्कूलों के लिए 100 करोड़ दिए गए हैं। इस तरह से देखा जाए तो कांग्रेस ने मुस्लिम वोट बैंक के लिए देश के संविधान को भी ताक पर रख दिया है। सत्ता के लिए राजनैतिक दल किस हद तक गिर जाएंगे, कहा नहीं जाएगा। सत्ता के लिए हर कोई मुसलमानों की गोद में सोना चाहता है, जबकि हिन्दुओं की उपेक्षा की की जा रहीं है। कर्नाटक में एक बार फिर कांग्रेस का काला चेहरा बेनकाब हो गया है।

विश्वनाथ सचदेव
वरिष्ठ पत्रकार, स्तंभकार

इतिहास के स्याह पक्ष से सबक लेने का है यह समय

महाराष्ट्र के बुलढाणा जिले के युवा किसान कैलाश नागरे को पांच साल पहले युवा किसान पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उन्हें यह सम्मान कृषि-कार्य में उल्लेखनीय सफलता पाने और किसानों में जागरूकता लाने के लिए किये गये प्रयासों के कारण मिला था। पांच दिन पहले कैलाश नागरे ने आत्महत्या कर ली है। प्राप्त जानकारी के अनुसार आत्महत्या का कारण यह था कि कैलाश भरसक प्रयास के बावजूद सरकार को उनके इलाके के खेतों में किसानों तक पानी पहुंचाने की मांग नहीं मनवा सके थे। इसलिए हताशा में कैलाश ने यह आत्मघाती कदम उठाया है। वैसे भी किसानों की आत्महत्याओं का सिलसिला महाराष्ट्र में थमने का नाम नहीं ले रहा। पिछले पांच महीनों में देश के इस उन्नत समझे जाने वाले राज्य में एक हजार से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं।

विकास के दावों के बावजूद महाराष्ट्र सरकार पर ऋण का बोझ लगातार बढ़ रहा है। सन्म 2014 में यह राशि 2.94 लाख करोड़ रुपये थी- 2024 में यह राशि बढ़कर 7.82 लाख करोड़ रुपए है। यह कुछ आंकड़े हैं जो चौंकाते भी हैं और परेशान भी करते हैं। परेशान इसलिए भी कि इन विषयों पर राज्य में चर्चा भी नहीं हो रही। इस बारे में न सरकार कुछ बोल रही है और न ही विपक्ष कुछ करता दिखाई दे रहा है। यह सब भुलाकर राजनीति के गलियारों में आज चर्चा एक ऐसे बादशाह की कब्र को लेकर हो रही है, जिसे मरे हुए सात सौ साल से अधिक हो चुके हैं। चर्चा ही नहीं हो रही आंदोलन शुरू हो गया है सारे राज्य में। विश्व हिंदू परिषद और बजरंग दल जैसे संगठनों ने तो घोषणा कर दी है कि यदि महीने भर के भीतर सरकार इस कब्र को नष्ट नहीं कर देती तो उनके लाखों कार्यकर्ता 'कार सेवा करके' यह काम करेंगे। जहां तक सरकार का सवाल है राज्य के भाजपाई मुख्यमंत्री इसे एक 'दुर्भाग्य' बता रहे हैं कि उन्हें औरंगजेब जैसे बादशाह की कब्र की रक्षा का दायित्व निभाना पड़ रहा है। फिर भी उन्होंने घोषणा की है कि वे औरंगजेब का महिमामंडन नहीं होने देंगे।

जी हां, विवादों के केंद्र में जो कब्र है वह मुगल बादशाह औरंगजेब की है। महाराष्ट्र के औरंगाबाद में 717 साल पहले औरंगजेब की मृत्यु हुई थी, और वहीं उसे दफना दिया गया था। औरंगजेब की इच्छा के अनुसार इस सादी-सी कब्र के ऊपर छत भी नहीं बनाई गई थी। पहले छत्रपति शिवाजी महाराज और फिर उनके बाद मराठा शासकों को हराने में औरंगजेब को पूरी सफलता कभी नहीं मिल पाई। वह मराठा शासन को समाप्त करना चाहता था, पर उसी मराठा-भूमि में उसे अपने प्राण त्यागने पड़े!

यह सब हमारे इतिहास का हिस्सा है। औरंगजेब की क्रूरता से सब परिचित हैं। यह भी सही है कि उसने जनता पर कई तरह से अत्याचार किए यह भी जग जाहिर है कि उसने अनेक हिंदू मंदिरों को तोड़ा। यहां अनेक का मतलब सैकड़ों से लेकर हजारों तक बताया जाता है। उसकी क्रूरता का आलम यह था कि गद्दी हथियाने के लिए उसने अपने भाई को मरवा डाला, अपने पिता शाहजहां को आगरा के किले में बंदी बनाकर रखा, उसे पीने के लिए पानी भी नाप के दिया जाता था। औरंगजेब की क्रूरता हमारे इतिहास का हिस्सा है। इसी तरह यह भी एक हकीकत है कि इस क्रूर शासक ने लगभग पचास साल तक राज किया था। इस दौरान उसने मंदिर तुड़वाए भी और मंदिर बनवाए भी। औरंगजेब ने वह सब किया जो कोई क्रूर शासक करता है। शिवाजी महाराज का तो वह कुछ बिगाड़ नहीं सका, पर उनके बाद छत्रपति संभाजी महाराज के साथ उसने जो क्रूरता बरती, वह अपने आप में किसी पराकाष्ठा से कम नहीं थी।

छत्रपति संभाजी महाराज की गाथा इन दिनों सुनी-सुनाई जा रही है। उनके जीवन-चरित्र को लेकर बनी चर्चित फिल्म 'छावा' ने औरंगजेब के

अत्याचारों को फिर से चर्चा का विषय बना दिया है। संभाजी नगर में औरंगजेब की कब्र को नष्ट करने की मांग से भी इस फिल्म का रिश्ता है। मांग यह की जा रही है कि यह कब्र एक क्रूर शासक को महिमामंडित करती है, इसलिए इसे तत्काल नष्ट कर दिया जाना चाहिए। दुर्भाग्य की बात यह है कि इस सारे विवाद को सांप्रदायिक रंग दिया जा रहा है। औरंगजेब मुस्लिम शासक था, उसने मंदिर तोड़े थे, उसने जजिया कर लगाया था, वह हद दर्जे का क्रूर था, ये सारी बातें अपनी जगह सही हैं। लेकिन हकीकत यह भी है कि औरंगजेब का होना हमारे इतिहास का एक अध्याय है। इतिहास से सीखने के लिए जरूरी है उसे याद रखा जाए। याद रखने का यह मतलब कतई नहीं है कि यह उसका महिमा-मंडन है। याद रखने का मतलब यह है कि हम इस बात के प्रति जागरूक रहें कि फिर कोई शासक औरंगजेब की तरह हम पर अत्याचार न कर सके।

मैं भी गया था तीस-चालीस साल पहले औरंगजेब की कब्र देखने। जिज्ञासा थी कि स्वयं को आलमगीर कहने वाले उस क्रूर शासक ने अपनी कब्र कैसे बनवाई थी। उसे देखकर मेरे मन में कहीं भी उस शासक के महिमा-मंडन जैसी बात नहीं आई थी। जो बात मन में आयी थी वह यह थी कि भाइयों को मरवा कर, पिता को कैद करके, प्रजा पर अत्याचार करके उस शासक को अंततः क्या हासिल हुआ। वह कच्ची कब्र !

हमारे इतिहास से यदि हमें कुछ सीखना है तो वह यह है कि कोई और औरंगजेब क्रूरता और अत्याचार से महान नहीं बन सकता। इतिहास के ऐसे अध्याय को याद रखना जरूरी है, ताकि अब किसी को दुहराने न दिया जाए। जर्मनी में हिटलर के अत्याचार के सारे निशान सुरक्षित रखे गए हैं, ताकि आने वाली पीढ़ियों में अत्याचार के खिलाफ भावना बन सके, बनी रहे। आज जो विवाद इस कब्र के संदर्भ में उठ रहा है, दुर्भाग्य से, इतिहास से कुछ सीखने का उससे कोई रिश्ता नहीं। जो हो रहा है उससे स्पष्ट है कि कुछ मुद्दों को भटकाने के लिए कुछ मुद्दे उठाए जा रहे हैं। कुछ भुलाने के लिए कुछ याद दिलाया जा रहा है। इतिहास के गड़े मुर्दे उखाड़ कर देश में हिंदू-मुसलमान के भेद को हवा दी जा रही है। इतिहास का अर्थ है जो हुआ था। जो हुआ था वह सब दुहराने की नहीं, उससे कुछ सीख कर आगे बढ़ने की आवश्यकता है।

यह दुर्भाग्य ही है कि आज सांप्रदायिकता की आग को हवा देने की कोशिशें हो रही हैं, इन्हीं कोशिशों का हिस्सा यह तथ्य भी है कि बुलढाणा के युवा किसान की आत्महत्या जैसे मुद्दों को भुला देने वाला इतिहास बनाया जा रहा है और भुला देने जैसी बातों को कुरेद-कुरेद कर सामने लाया जा रहा है। किसी औरंगजेब का अत्याचार बीते हुए कल की बात है। आने वाले कल का तकाजा है कि हम देश की आर्थिक और सामाजिक विषमता, गरीबी, बेरोजगारी जैसे मुद्दों को याद रखें। किसी क्रूर शासक की मजार का होना न होना कोई मायने नहीं रखता, मायने यह बात रखती है कि हम अपने आने वाले कल को बेहतर बनाने के प्रति कितने जागरूक हैं। इस जागरूकता का तकाजा है कि हम अपने देश को विभाजन की आग से बचाएं। विभाजन की आग की गर्म लपटें नहीं, धार्मिक सौहार्द की हवा के ठंडे झोंकों की जरूरत है हमें।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।)

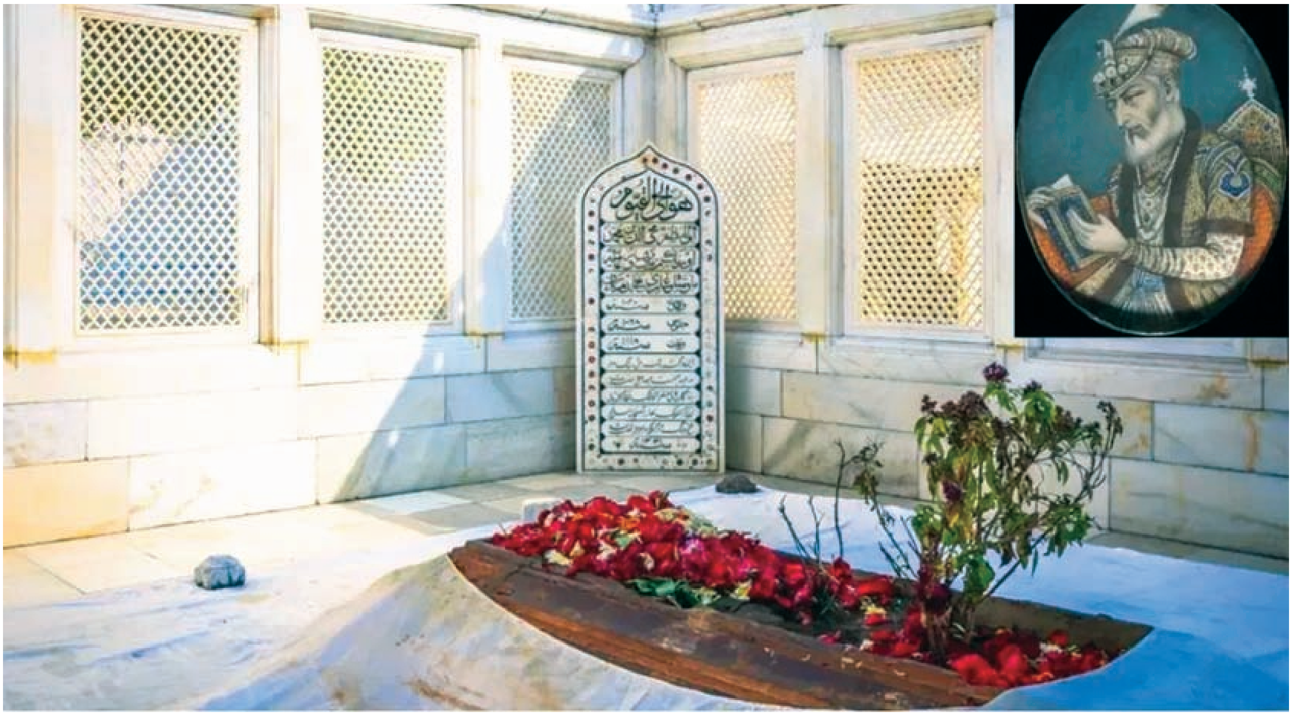

ग्रोक एआइ इतनी चर्चित क्यों?

सुनील कुमार महला

आज पूरा विश्व धीरे-धीरे ही सही आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस(एआइ) के युग में प्रवेश कर रहा है। कहना गलत नहीं होगा कि आज के इस युग में व्यवसाय और सरकारी संस्थाएँ ग्राहकों के अनुभवों को बेहतर बनाने, प्रतिस्पर्धात्मक लाभ बढ़ाने और समुदायों में सुरक्षा और संरक्षा में सुधार करने के लिए मशीन लर्निंग और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआइ) जैसे कम्प्यूट-इंटेंसिव अनुप्रयोगों की ओर तेजी से बढ़ रही हैं इन दिनों चैटजीपीटी, गूगल जेमिनी, मेटा एआई और डीपसीक जैसे एआइ चैटबॉट के बीच ग्रोक एआइ(आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस) इंटरनेट की दुनिया में काफी चर्चा का विषय बना हुआ है। एआइ का यह(ग्रोक) एक नया-नवेला प्लेटफॉर्म है, और इसे इन दिनों भारत में भी बहुत पसंद किया जा रहा है।

वास्तव में,ग्रोक एक नया, सरल प्रोसेसिंग आर्किटेक्चर पेश कर रहा है, जिसे विशेष रूप से मशीन लर्निंग अनुप्रयोगों और अन्य कम्प्यूट-गहन कार्यभार की प्रदर्शन आवश्यकताओं के लिए डिजाइन किया गया है। पाठकों को बताता चलूं कि ग्रोक को एक्स एआइ नामक एक कंपनी ने विकसित किया है, जो कि संयुक्त राज्य अमेरिका(यूएसए) में है। इस चैटबॉट को एलन मस्क के एआइ रीसर्च ऑर्गनाइजेशन (एक्स एआइ) की ओर से बनाया गया है। पाठकों को जानकारी देना चाहूंगा कि सॉफ़्टवेयर-प्रथम मानसिकता से प्रेरित, ग्रोक की चिप वास्तुकला एक नया प्रसंस्करण प्रतिमान प्रदान करती है, जिसमें निष्पादन और डेटा प्रवाह का नियंत्रण हार्डवेयर से कंपाइलर में स्थानांतरित हो जाता है। सभी निष्पादन योजनाएँ सॉफ़्टवेयर में होती हैं, जिससे अतिरिक्त प्रसंस्करण क्षमताओं के लिए मूल्यवान सिलिकॉन स्थान खाली हो जाता है। यह दृष्टिकोण ग्रोग को पारंपरिक, हार्डवेयर-केंद्रित वास्तुशिल्प मॉडल की बाधाओं को मौलिक रूप से बायपास करने की अनुमति देता है। उपलब्ध जानकारी के अनुसार ग्रोक की सरलीकृत वास्तुकला चिप से बाहरी सर्किटरी को हटा देती है ताकि प्रति वर्ग मिलीमीटर अधिक प्रदर्शन के साथ अधिक कुशल सिलिकॉन डिजाइन प्राप्त किया जा सके। इससे कैशिंग, कोर-टू-कोर संचार, सट्टा और आउट-ऑफ-ऑर्डर निष्पादन की आवश्यकता समाप्त हो जाती है। कुल क्रॉस-चिप बैंडविड्थ और गणना के लिए उपयोग किए जाने वाले कुल ट्रांजिस्टर के उच्च प्रतिशत को बढ़ाकर उच्च कंप्यूट घनत्व प्राप्त किया जाता है।

ग्रोक सिस्टम आर्किटेक्चर की सरलता हाथ अनुकूलन, प्रोफाइलिंग और विशेष डिवाइस ज्ञान की आवश्यकता को समाप्त करती है जो पारंपरिक हार्डवेयर-केंद्रित डिजाइन दृष्टिकोणों पर हावी है। इसके बजाय ग्रोक कंपाइलर पर ध्यान केंद्रित करता है, जिससे सॉफ़्टवेयर आवश्यकताओं को हार्डवेयर विनिर्देश को चलाने में सक्षम बनाया जाता है। ग्रोक उत्पाद अगली पीढ़ी की कम्प्यूट तकनीकों के निर्माण के लिए आवश्यक विविध, वास्तविक दुनिया के कम्प्यूटेशन सेट को जल्दी से अनुकूलित करने की सुविधा प्रदान करते हैं। मशीन लर्निंग की तैनाती और निष्पादन को सरल बनाकर, ग्रोक एआई अनुप्रयोगों और अंतर्दृष्टि के लाभों को बहुत व्यापक दर्शकों तक विस्तारित करना संभव बनाता है। संपूर्ण प्रणाली - सॉफ़्टवेयर और हार्डवेयर - ग्रोक की तकनीक का उपयोग करने वाले सभी लोगों के लिए अनुभव को काफी सरल और बेहतर बनाता है।ग्रोक एआई अनुप्रयोगों की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए डीप लर्निंग इंफरेंस प्रोसेसिंग के लिए आदर्श है, लेकिन यह समझना महत्वपूर्ण है कि ग्रोक चिप एक सामान्य-उद्देश्य, ट्यूरिंग-पूर्ण, कंप्यूट आर्किटेक्चर है। यह किसी भी उच्च-प्रदर्शन, कम विलंबता, कंप्यूट-गहन कार्यभार के लिए एक आदर्श प्लेटफॉर्म है।

पाठकों को बताता चलूं कि इसको बनाने के पीछे का उद्देश्य ये है कि ये लोगों के पूछे गए सवालों का जवाब देने और बाकी अन्य कामों को आसान बनाएगा।यदि कोई भी यूजर ग्रोक से कोई भी सवाल करना चाहता है, तो उसे एक्स पर @ग्रोक को टैग करके पूछ सकते हैं। इसके अलावा, ग्रोक एआइ की आधिकारिक वेबसाइट ग्रोक डाट कॉम पर जाकर भी कोई भी व्यक्ति ग्रोक से अपने कोई भी सवाल पूछ सकते हैं। उल्लेखनीय है कि ग्रोक 3 एआइ मॉडल, अपने पिछले जनरेशन(ग्रोक 2 एआइ मॉडल) से दस गुना तेज और एक बहुत ही पावरफुल एआइ चैटबाट मॉडल है। दूसरे शब्दों में कहें तो यह सुपीरियर रीजनिंग और बड़े प्रीट्रेनिंग नॉलेज का ब्लेंड कहा जा सकता है। ये चैटबॉट कोडिंग, मैथमेटिक्स, इमेज क्रिएशन, इंस्ट्रक्शन-ड्रिवन टास्क्स और रीजनिंग जैसे कई काम कर सकता है। ये प्रॉब्लम्स सॉल्व करने के साथ-साथ गेम्स भी बना सकता है। सच तो यह है कि यह तकनीकी रूप से बहुत ही सक्षम, संवाद-कला में अद्वितीय(बेबाकी से जबाब देने वाला) मॉडल है। उपलब्ध जानकारी के अनुसार यह मानव जैसे तर्क(लोजिक) और ह्यूमर के साथ जवाब देता है। यहां तक कि यह स्लैंग और अभद्र भाषा का इस्तेमाल करने से भी परहेज नहीं कर रहा है। पाठकों को बताता चलूं कि हाल ही में ग्रोक द्वारा अभद्र भाषा के इस्तेमाल की हरकत के कारण बात इतनी ऊपर तक पहुंच गई कि आईटी मंत्रालय ने ग्रोक एआइ को बनाने वाली कंपनी एक्स (जिसे पहले ट्विटर के नाम से जाना जाता था) को जवाब तलब किया है।

ग्रोक अन्य चैटबॉट से काफी अलग है। वास्तव में, यहां यह कहना गलत नहीं होगा कि ग्रोक को एक्स पर मौजूद डेटा से प्रशिक्षित किया गया है, जिसमें सोशल मीडिया पोस्ट, बातचीत और ट्रेंड्स शामिल हैं। इससे यह इंटरनेट पर ट्रेंडिंग लैंग्वेज और स्लैंग जैसी जानकारियों को समझता है और

उसी अंदाज में जवाब देता है।सच तो यह है कि इसे इस तरह से डिजाइन/निर्माण किया गया है कि यह यूजर्स के साथ मजाकिया और संवादात्मक तरीके से बात करे। दूसरे शब्दों में कहें तो, यह मजाकिया (ह्यूमर) और बगावत वाले लहजे में जबाब देता है।इसे हम कुछ यूं समझ सकते हैं। मतलब कि अगर यूजर सीधा सवाल पूछता है, तो जवाब भी सीधा होता है, लेकिन अगर यूजर अनौपचारिक या तीखी भाषा इस्तेमाल करता है, तो ग्रोक भी उसी लहजे में जवाब दे सकता है। उपलब्ध जानकारी के अनुसार ग्रोक, यूजर्स के सवालों का जवाब देने के लिए दो मोड्स का इस्तेमाल करता है। इसमें पहला 'रेगुलर मोड' है, जिसमें यह संयमित और सामान्य भाषा में जवाब देता है। वहीं 'अनहिंज्ड मोड' में यह बिना फि ल्टर के जवाब देता है, जो कभी-कभी चौंकाने (आपत्तिजनक/अनफिल्टर्ड) वाला हो सकता है। वास्तव में, यह इसका अनहिंज्ड मोड ही वजह है कि ग्रोक यूजर्स को रिप्लाई में कई बार अपशब्द(अनफिल्टर्ड लैंग्वेज)तक कह देता है।

ग्रोक अपनी सर्वांगीण क्षमताओं के कारण यूजर्स के बीच इन दिनों खास चर्चा का विषय बना हुआ है। एक्स एआई ने ग्रोक को इस विचार के साथ विकसित किया है कि यह मानवता के लिए सहायक सिद्ध हो सके। कंपनी का मिशन है कि वह ब्रहमांड के मूलभूत सवालों जैसे कि जीवन का उद्देश्य, ब्रह्मांड की उत्पत्ति, और अंतरिक्ष में हमारी स्थिति को समझने में मदद करे। वास्तव में,ग्रोक एआइ एक बड़ा भाषा मॉडल है, जिसे टेक्स्ट बनाने, बदलने या उसका विश्लेषण करने के लिए डिजाइन किया गया है। यह इंटरनेट सर्च कार्यक्षमता और छवि निर्माण सहित उन्नत जनरेटिव एआई क्षमताएँ भी प्रदान करता है, जो इसे विभिन्न कार्यों के लिए एक बहुमुखी उपकरण बनाता है।ग्रोक का एक अनूठा और मौलिक लाभ यह है कि इसे एक्स प्लेटफॉर्म के माध्यम से दुनिया का वास्तविक समय का ज्ञान है। यह उन मसालेदार सवालों के भी जवाब देने में सक्षम है, जिन्हें अधिकांश अन्य एआइ सिस्टम द्वारा खारिज कर दिया जाता है।ग्रोक वर्तमान घटनाओं के बारे में वास्तविक समय के उत्तर देने के लिए एक्स का लाभ उठाता है। ग्रोक एक्स एआइ के ऑरोरा, जो एक अलग वीडियो मॉडल है, का उपयोग करके छवियां उत्पन्न करता है। पाठकों को जानकारी देना चाहूंगा कि ऑरोरा एक ऑटोरिग्रैसिव इमेज जेनरेशन मॉडल है।ऑटोरिग्रैसिव सांख्यिकीय तकनीक को संदर्भित करता है, जिसका उपयोग मॉडल यह अनुमान लगाने के लिए करता है कि अनुक्रम में आगे कौन सी सामग्री आने की सबसे अधिक संभावना है। उपलब्ध जानकारी के अनुसार ग्रोक और चैटजीपीटी या लामा जैसे अन्य जनरेटिव एआई उत्पादों के बीच एक बड़ा अंतर यह है कि ग्रोक पूरी तरह से एक्स सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के भीतर काम करता है। ग्रोक उत्पादकता से संबंधित सवालों के जवाब दे सकता है, टेक्स्ट का विश्लेषण कर सकता है और गणित और कोडिंग समस्याओं को हल कर सकता है। यह कई अन्य कार्य भी कर सकता है जो जनरेटिव एआई व्यवसाय के लिए कर सकता है। हालाँकि, इसका डेटा एक्स प्लेटफॉर्म के भीतर ही रहता है।

वास्तव में ग्रोक का लक्ष्य उपयोगकताओं को एक बाहरी, नया दृष्टिकोण प्रदान करना है, जो सामान्य मानवीय सोच से परे हो। ग्रोक की खास बात यह है कि यह जटिल सवालों के जवाब में भी स्पष्टता और संक्षिप्तता बनाए रखता है। जैसा कि ऊपर बता चुका हूं कि इसकी शैली संवादात्मक शैली है। पाठकों को जानकारी देना चाहूंगा कि ग्रोक की जानकारी लगातार अपडेट होती रहती है, जिससे यह नवीनतम घटनाओं और खोजों के बारे में भी बता सकता है। इसकी बहुभाषी क्षमता के कारण यह हिंदी सहित कई भाषाओं में आसानी से संवाद कर सकता है, जिससे यह वैश्विक उपयोगकताओं के लिए सुलभ है। भारत में भी यह इसीलिए लोकप्रिय हो रहा है, क्यों कि यहां अधिकतर हिंदी का प्रयोग किया जाता है। ग्रोक उपयोगकताओं द्वारा अपलोड की गई सामग्री, जैसे कि चित्र, कोई पीडीएफ और कोई टेक्स्ट फाइल्स, आदि को आसानी से समझ सकता है। ग्रोक न केवल नवीनतम वैज्ञानिक अनुमानों के आधार पर जवाब देने में सक्षम है, अपितु यह जवाबों को रोचक तरीके से प्रस्तुत करने की अभूतपूर्व क्षमताएं रखता है।यह असामान्य(एब्नार्मल), फिलासीफिकल (दार्शनिक) सवालों तक के जवाब देने में सक्षम है।

बहरहाल कहना गलत नहीं होगा कि हालांकि, ग्रोक एक बेहद शक्तिशाली ए आइ है, लेकिन इसकी अपनी कुछ सीमाएँ भी हैं। उदाहरण के लिए, यह स्वतंत्र रूप से नैतिक निर्णय नहीं ले सकता है। वास्तव में सच तो यह है कि मशीन में इंसान की भांति स्वाभाविक बुद्धिमत्ता और ज्ञान का अभाव होता है। एक इंसान अपनी बुद्धिमत्ता, ज्ञान, और समझ से संज्ञान में होता है। इंसान नई सांदर्भिक स्थितियों का सामना करने के लिए अपने अनुभव और सीख से सीधे निर्णय ले सकता है, वहीं मशीन कितनी ही आधुनिक क्यों न हो जाए, मशीन आखिर मशीन ही होती है।साथ ही, पाठकों को बताता चलूं कि ग्रोक केवल वही चित्र संपादित कर सकता है, जो उसने पहले उत्पन्न किए हों। हाल फिलहाल,ग्रोक के बारे में यह बात कही जा सकती है कि यह लगातार उन्नत किया जा रहा है।आने वाले समय में यह अधिक भाषाओं तक अपनी पहुंच बना सकेगा, और अधिक अच्छे से चीजों का विश्लेषण कर सकेगा, टेक्स्ट, पीडीएफ को और अधिक बेहतरी से समझ सकेगा, ऐसी उम्मीदें की जा सकतीं हैं।आने वाले समय में यह मानवीय भावनाओं को भी और अधिक बेहतरी से समझ सकेगा, लेकिन यह मानव का हूबहू विकल्प नहीं हो सकता है।आने वाले समय में, शिक्षा, अनुसंधान, और यहाँ तक कि व्यक्तिगत सहायता के क्षेत्र तक में भी यह क्रांति ला सकता है।

यहां यह भी कहना गलत नहीं होगा कि ग्रोक आज ग्रोथ लालबुझक्कड़ की तरह लोगों के सवालों का धड़ाधड़ जवाब दे रहा है, लेकिन यह कोई अजूबा नहीं है। दरअसल, आज सोशल मीडिया पर हम सभी ने जाने अनजाने में बहुत सा डाटा शेयर कर दिया है और ग्रोक वही सब रिकार्डेड बातें/मैटीरियल एआइ एल्गोरिद्म की सहायता से हमें अविलम्ब बता रहा है। सच तो यह है कि आज हम भारतीयों की नहीं अपितु संपूर्ण विश्व की महत्वपूर्ण जानकारियां तकनीक में एडवांस लोगों के पास उपलब्ध हैं। अंत में यही कहूंगा कि यह ठीक है आज हम तकनीक के क्षेत्र में लगातार आगे बढ़ते चले जा रहे हैं, लेकिन तकनीक का सही इस्तेमाल किया जाना बहुत आवश्यक है।

अमेरिकी उत्पादों से व्यापार युद्ध

देविंदर शर्मा
वरिष्ठ स्तंभकार

जब हाल ही में मैंने पढ़ा कि अमेरिकी वाणिज्य सचिव हॉवर्ड लुटनिक हैड ने विशेष तौर पर भारत से कहा है कि वह अपना बाजार अत्यधिक सब्सिडी प्राप्त अमेरिकी कृषि उत्पादों के लिए खोले, तो इस पर, मुझे विश्व बैंक के पूर्व मुख्य अर्थशास्त्री निकोलस स्टर्न के बोल याद आ गए, जो उन्होंने उस समय देश में अपनी यात्रा के दौरान कहे थे, संक्षेप में कुछ यह था ह्यमैं सहमत हूं कि अमेरिकी किसानों को जिस मात्रा की सब्सिडी मिलती है, वह एक प्रकार से पाप है, लेकिन यदि भारत अपना बाजार नहीं खोलता, तो यह आपदा का नुस्खा होगा ह्व

एन्न वेनमैन (जिनका कार्यकाल जॉर्ज बुश जूनियर के समय 2001-2005 तक था) से शुरू होकर कुछ इसी किस्म का दोगलापन अमेरिका के एक के बाद एक आए कृषि मंत्री समय-समय पर दिखाते रहे हैं। मुझे याद आ रहा है कि किस प्रकार उन्होंने वाशिंगटन डीसी में अंतर्राष्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान (आईएफपीआरआई) में अपने संबोधन में बेशर्मी से विश्व बैंक के मुख्य अर्थशास्त्री की उस मूर्खतापूर्ण दलील (जो कि हास्यास्पद भी थी) का समर्थन किया, जिसमें भारत कृषि मंडी को जबरदस्ती खोलने की बात कही गई थी। दरअसल, एक समय ऐसा भी आया जब अमेरिका के कम-से-कम 14 कृषि फसल निर्यात समूहों ने अमेरिकी व्यापार प्रतिनिधि (यूएसटीआर) को पत्र लिखकर भारत में न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के नाम पर फसल-विशेष को दिए जाने वाले मूल्य संरक्षण की ऊपरी सीमा तय करवाने की मांग की ताकि अमेरिकी निर्यात की भारत में राह खुल सके।

इसलिए अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप द्वारा शुरू किए गए अवांछित व्यापार युद्ध से मैं हैरान नहीं हूं। यह एकदम जाहिर है कि विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) में लंबे समय तक चली बहुपक्षीय वाताओं से जो कुछ अमेरिका हासिल नहीं कर पाया, उसकी प्राप्ति के वास्ते अब ट्रंप की अरबपति मित्र मंडली विकासशील देशों को घुटनों पर लाने की गलत सलाह दे रही है। लेकिन कई प्रमुख अर्थव्यवस्थाएं अब अवज्ञा में खड़ी होने लगी हैं, मैं नहीं चाहूंगा कि भारत ऐसा कुछ दिखाए कि यदि उसे कुछ झुकने के लिए कहा जाए, तो ऐसा आभास दे कि वह रेंगने तक को राजी है।

यहां मैं एक और कहानी सुनाना चाहूंगा। कुछ साल पहले, अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने टिप्पणी की थी कि चीन के 'खराब मानवाधिकार रिकॉर्ड' के कारण अमेरिका उसके साथ व्यापार नहीं करेगा। अगले दिन मैंने संयोग से बीबीसी टीवी चैनल चालू किया, जहां एक पत्रकार तत्कालीन चीनी राष्ट्रपति से पूछ रहा था : 'अमेरिकी राष्ट्रपति का व्यापार रोकने वाली धमकी पर आपकी क्या प्रतिक्रिया है।' उनका जवाब भी उतना ही रूखा था : 'अमेरिका के साथ व्यापार? जब हमने 4,000 साल से ज्यादा अमेरिका के साथ व्यापार किया ही नहीं, तो इससे अब क्या फर्क पड़ने वाला है?' इस बयान के अगले दिन ही अमेरिकी व्यापार और उद्योग जगत अपने राष्ट्रपति का चीन के साथ व्यापार बंद करने के आह्वान के विरुद्ध लामबंद हो गया। आखिरकार बिल क्लिंटन को घरेलू उद्योग लॉबी के सामने झुकना पड़ा और उन्होंने फिर कभी इस मुद्दे को नहीं छेड़ा। नए टैरिफ युद्ध वाले मुद्दे पर फिर से लौटते हैं, भारत में अमेरिकी कृषि उत्पादों के प्रवेश पर नियंत्रण व्यवस्था होने की वजह से ट्रम्प हमारी आलोचना वैश्विक 'टैरिफ किंग' का ठप्पा लगाकर कर सकते हैं (अमेरिका के 5 प्रतिशत आयात शुल्क के मुकाबले भारत का औसतन आयात शुल्क लगभग 39 प्रतिशत है), लेकिन वास्तविकता यह है जो शुल्क भारत ने लगा रखा है, वह विश्व व्यापार संगठन के उस प्रावधान के अनुरूप है जिसमें टैरिफ दर किसी देश के विकास की श्रेणी और व्यापार संहिता में वर्णित 'विशेष एवं विभेदक व्यवहार' नामक आकलन के आधार पर है, सनद रहे कि भारत किसी भी अवस्था में विश्व व्यापार संगठन द्वारा निर्धारित प्रावधानों का उल्लंघन नहीं कर रहा। भारत के अपेक्षाकृत उच्च शुल्क उक्त संगठन के नियमन में अंतर्निहित व्यापारिक सिद्धांतों पर आधारित हैं, न कि किसी की व्यक्तिगत सनक अथवा कल्पना से चालित।

दूसरी ओर, वास्तव में समस्या अमेरिका द्वारा कृषि के लिए दी जाने वाली भारी सब्सिडी है। इतनी ज्यादा कि 21 जुलाई, 2006 की फाइनेंशियल टाइम्स में लिखते हुए, यूरोपीय संघ के तत्कालीन व्यापार आयुक्त पीटर मैंडेलसन ने स्पष्ट रूप से कहा कि विकासशील देशों का कहना है कि वे अमेरिका के कृषि उत्पाद अधिक आयात करने को तो राजी हैं, लेकिन अमेरिकी कृषि सब्सिडी नहीं। इस बाबत उन्होंने भारत के तत्कालीन वाणिज्य मंत्री कमल नाथ को उद्धृत किया था : ह्यहमें अमेरिकी किसानों के साथ प्रतिस्पर्धा करने में कोई एतराज नहीं, लेकिन अमेरिकी खजाने का मुकाबला हम नहीं कर पाएंगे।ह्व सालों-साल अमेरिका ने अपनी कृषि के इर्द-गिर्द बनाए गए भारी सब्सिडी रूपी सुरक्षा दुर्ग को और मजबूत ही किया है। अमेरिकी कृषि विभाग की आर्थिक अनुसंधान सेवा के अनुसार, किसानों और पशुपालकों को प्रत्यक्ष सरकारी कृषि कार्यक्रम के तहत दी जानी वाली सीधी वित्तीय सहायता 2025 में 42.4 बिलियन डॉलर तक पहुंचने की उम्मीद है, जबकि 2024 के लिए पूवार्नुमान 9.3 बिलियन डॉलर का था। प्रति किसान गणना के आधार पर, अमेरिका अपने हरेक किसान की 26.8 लाख रुपये सालाना जितनी वित्तीय मदद करता है।

उदाहरणार्थ, विशेष तौर कपास का मुद्दा, जो कि विश्व व्यापार संगठन वाताओं में विवाद का एक मुद्दा बना हुआ है। 2021 में अमेरिका में कपास बिजाई के तहत औसत क्षेत्र 624.7 हेक्टेयर था, और इसको उगाने वाले किसान महज 8,103 थे जिन्हें अमेरिका ने अत्यंत भारी-भरकम सब्सिडी दी (जबकि भारत में कपास की खेती में 98.01 लाख किसान लगे थे)। नई दिल्ली स्थित विश्व व्यापार संगठन के अध्ययन केंद्र द्वारा की गई गणना बताती है कि 2021 में अमेरिकी कपास कृषक को 117,494 डॉलर सालाना वित्तीय सहायता मिली, वहीं इसकी तुलना में, भारत में कपास उगाने वाले किसान को महज 27 डॉलर की मदद मिल पाई।

आइए इस पर नजर डालें कि एग्रीगेट मेजर ऑफ सपोर्ट (एएमएस) फामूर्ला के साथ अमेरिका और यूरोपियन संघ फसल-विशेष की मदद कैसे करते हैं। व्यापार समझौता वाताओं के दौरान, अमीर एवं विकसित देश बहुत चतुराई के साथ यह सुनिश्चित करने में कामयाब रहे कि विकासशील देशों के लिए रखी गई 10 प्रतिशत गैर-न्यूनतम सीमा के बनिस्बत अमीर देश अपने लिए उच्च व्यावसायिक मूल्य वाली मुट्ठी भर फसलों के लिए ऊपरी सीमा (5 प्रतिशत अधिकतम) मद वितरित करने में सफल रहे। उदाहरण के लिए कपास का मामला लें। जहां यूरोपीय संघ ने 2006 में कपास के लिए 139 प्रतिशत सब्सिडी सहायता प्रदान की थी, वहीं इससे पांच साल पहले यानी 2001 में, अमेरिका ने विकसित देशों के लिए रखी सीमा के अलावा अतिरिक्त 74 प्रतिशत सहायता अपने कपास किसानों को दी थी।

कृषि आयातों पर कम टैरिफ केवल एक दिखावाभर है कि अमेरिकी कृषि एक खुला बाजार है। लेकिन बारीकी से देखने से पता चलता है कि अमेरिका ने आयात पर नकेल कसने के लिए 9,000 से अधिक गैर-टैरिफ बाधाएं (भारत द्वारा 600 के मुकाबले) खड़ी कर रखी हैं। जब ट्रम्प कहते हैं कि अमेरिका भी दूसरे देश की शुल्क दर के बराबर टैरिफ लगाने जा रहा है, तो भारत के पास भी अपनी खेती की रक्षा के लिए गैर-टैरिफ नाकेबंदी जैसे उपाय करने के वास्ते पर्याप्त गुंजाइश उपलब्ध है।

भारत को अपना घर व्यवस्थित करने के लिए कहने की बजाय अमेरिका से अपना कृषि बाजार खोलने के लिए कहने की जरूरत है। यह तभी हो सकता है जब अमेरिका से कहा जाए कि पहले वह अपनी कृषि के इर्द-गिर्द बनाया अत्यधिक सब्सिडी वाला दुर्ग ढहाए।

(लेखक कृषि एवं खाद्य मामलों के विशेषज्ञ हैं।)

▸▸शिवानंद मिश्रा
वरिष्ठ स्तंभकार

भारत की सबसे बड़ी एजुकेशन कंपनी बायजूस का पतन

एक समय था जब बायजूस को भारत की सबसे बड़ी और सफल एजुकेशन टेक्नोलॉजी (एडटेक) कंपनी के रूप में देखा जाता था। यह कंपनी बच्चों और युवाओं के लिए ऑनलाइन लर्निंग का सबसे प्रभावशाली माध्यम बन चुकी थी।

बायजूस के संस्थापक बायजू रविंद्रन ने अपने टीचिंग के अनोखे अंदाज और बिजनेस मॉडल के जरिए करोड़ों छात्रों और उनके माता-पिता का विश्वास जीता।

बायजू रविंद्रन ने 2006 में अपने टीचिंग करियर की शुरूआत की थी। शुरूआत में उन्होंने अपने कुछ दोस्तों को कैट (CAT) परीक्षा की तैयारी कराने में मदद की। रविंद्रन के पढ़ाने का अंदाज इतना लोकप्रिय हो गया कि जल्द ही वे बड़े ऑडिटोरियम में सैकड़ों छात्रों को पढ़ाने लगे। 2009 में उन्होंने 'बायजूस क्लासेस' की स्थापना की और अपने बिजनेस को पूरे भारत में फैलाने की योजना बनाई।

उनके पढ़ाने के तरीके को देखकर लाखों छात्र उनकी क्लास में शामिल होते गए। बायजूस का बिजनेस मॉडल बेहद प्रभावी था। छात्रों को शुरूआती क्लास मुफ्त में दी जाती थी, और बाद में उन्हें पेड कोर्सेज में शामिल किया जाता था। 2015 में बायजूस ने अपना पहला मोबाइल ऐप लॉन्च किया, जिससे वह छात्रों तक डिजिटल माध्यम से पहुंचने लगे। इसके बाद, बायजूस ने तेजी से ग्रोथ की और 2018 में यह भारत की सबसे बड़ी एडटेक कंपनी बन गई। इसे 'यूनिकॉर्न' का दर्जा प्राप्त हुआ, यानी इसकी वैल्यूएशन 1 बिलियन डॉलर से अधिक हो गई थी।

2020 में कोविड-19 महामारी ने पूरी दुनिया को बदल दिया। स्कूल और कॉलेज बंद हो गए और छात्रों को ऑनलाइन शिक्षा का सहारा लेना पड़ा। यह समय बायजूस के लिए एक बड़ा अवसर साबित हुआ। लॉकडाउन के दौरान, बायजूस ने अपने कोर्सेज मुफ्त में उपलब्ध कराए, जिससे छात्रों की संख्या में तेजी से बढ़ोतरी हुई। छात्रों और उनके माता-पिता को ऑनलाइन लर्निंग का यह तरीका पसंद आने लगा। बायजूस के ऐप का इस्तेमाल करने वालों की संख्या करोड़ों में पहुंच गई।

बायजूस की बढ़ती लोकप्रियता ने वेंचर कैपिटल इन्वेस्टर्स को आकर्षित किया। बायजूस को सिकोया और मार्क जुकरबर्ग की कंपनी समेत कई बड़ी कंपनियों से भारी फंडिंग मिली। इसके साथ ही बायजूस ने अन्य एडटेक स्टार्टअप्स का अधिग्रहण भी शुरू कर दिया, जिनमें वाइटहैट जूनियर, ग्रेट लर्निंग, और आकाश इंस्टीट्यूट जैसे बड़े नाम शामिल थे। इस अधिग्रहण से बायजूस की वैल्यूएशन 22 बिलियन डॉलर तक पहुंच गई, लेकिन इसके पीछे कंपनी ने भारी कर्ज लिया, जो उसके पतन की शुरूआत साबित हुआ।

कोविड-19 के बाद जब स्कूल और कॉलेज फिर से खुलने लगे तो बायजूस की ग्रोथ धीमी होने लगी। छात्रों को वापस ऑफलाइन क्लासेस की ओर लौटने में ज्यादा रुचि दिखाने लगी। इसके बावजूद, बायजूस ने अपने बिजनेस मॉडल में कोई बड़ा बदलाव नहीं किया। उन्होंने आक्रामक सेल्स स्ट्रेटजी अपनाई जिसमें सेल्समैन को छात्रों के माता-पिता पर दबाव बनाकर कोर्स बेचने के लिए मजबूर किया गया। इस आक्रामक रणनीति ने बायजूस की छवि को नुकसान पहुंचाया।

कंपनी की आक्रामक सेल्स पिच में छात्रों और उनके माता-पिता को यह एहसास कराया जाता था कि यदि वे बायजूस के कोर्स नहीं लेते तो उनके बच्चे प्रतियोगी परीक्षाओं में पीछे रह जाएंगे। कई माता-पिता को झूठी जानकारी दी गई और भारी फीस वसूली गई। इसके अलावा, कंपनी के कस्टमर सर्विस में भी समस्याएं आनी शुरू हो गईं। ग्राहकों को रिफंड और सब्सक्रिप्शन कैंसिलेशन में काफी परेशानियां उठानी पड़ीं, जिससे उनकी

विश्वसनीयता पर गहरा असर पड़ा।

बायजूस के पतन का सबसे बड़ा कारण उसका भारी कर्ज था। कंपनी ने नए स्टार्टअप्स को खरीदने के लिए भारी-भरकम कर्ज लिया था जो कि उसके बिजनेस मॉडल के अनुकूल नहीं था। जैसे-जैसे कर्ज बढ़ता गया, बायजूस की फाइनेंशियल स्थिति बिगड़ती गई। 2022 में, कंपनी ने अपने कई कर्मचारियों को निकालना शुरू किया और अपने कई ऑफिस भी बंद कर दिए।

इसके अलावा, बायजूस पर कानूनी मामलों की भी मार पड़ी। अमेरिकी कंपनियों ने बायजूस पर लोन डिफॉल्ट और टर्म्स वायलेशन के आरोप लगाए जिससे कंपनी की साख पर और बुरा असर पड़ा। सितंबर 2023 में बीसीसीआई ने भी बायजूस पर पेमेंट डिफॉल्ट के कारण इंसॉल्वेंसी प्रोसीडिंग्स शुरू कर दीं। इस कानूनी लड़ाई ने बायजूस को और भी ज्यादा कमजोर बना दिया।

2023 आते-आते बायजूस की वैल्यूएशन लगभग 99% गिर चुकी थी। एक समय 22 बिलियन डॉलर की वैल्यूएशन वाली यह कंपनी अब केवल 225 मिलियन डॉलर पर पहुंच गई थी। कंपनी के पास अब सीमित संसाधन बचे थे, और उसे अपनी कर्ज की अदायगी के लिए संघर्ष करना पड़ रहा था। कंपनी ने अपने यूएस-आधारित लर्निंग प्लेटफॉर्म 'एपिक' को बेचना शुरू कर दिया और अन्य स्टार्टअप्स भी बेचने की योजना बनाई।

बायजूस के सामने सबसे बड़ी चुनौती उसकी खोई हुई विश्वसनीयता को वापस पाना है। कंपनी को अपने बिजनेस मॉडल में बड़े बदलाव करने होंगे और छात्रों और उनके माता-पिता के साथ पारदर्शिता बनानी होगी। इसके अलावा, कंपनी को अपने कर्ज का प्रबंधन करने और वित्तीय स्थिरता हासिल करने की दिशा में भी काम करना होगा।

हालांकि, बायजूस की वापसी मुश्किल नजर आ रही है लेकिन अगर सही कदम उठाए जाएं, तो यह असंभव नहीं है।

बायजूस का पतन एक उदाहरण है कि कैसे एक सफल कंपनी गलत वित्तीय निर्णयों और आक्रामक बिजनेस रणनीतियों के कारण बर्बाद हो सकती है। यह घटना उन सभी स्टार्टअप्स के लिए एक सीख है कि केवल ग्रोथ और वैल्यूएशन पर ध्यान केंद्रित करने से ज्यादा जरूरी है ग्राहकों के साथ विश्वास बनाना और उन्हें सही सेवाएं प्रदान करना। बायजूस की कहानी हमें यह भी सिखाती है कि शिक्षा का मकसद केवल मुनाफा कमाना नहीं बल्कि छात्रों के भविष्य को बेहतर बनाना होना चाहिए।

भारत की नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2025

विजय गर्ग
वरिष्ठ शैक्षणिक स्तंभकार

भारत सरकार ने बहुप्रतीक्षित राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2025 का अनावरण किया है, जिसमें देश की शिक्षा प्रणाली के आधुनिकीकरण के उद्देश्य से परिवर्तनकारी परिवर्तन शुरू किए गए हैं। यह नीति डिजिटल शिक्षा, कौशल-आधारित शिक्षा, पाठ्यक्रम पुनर्गठन और वैश्विक प्रतिस्पर्धा को प्राथमिकता देती है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि छात्र भविष्य के नौकरी बाजार के लिए बेहतर हैं।

एनईपी 2025 की मुख्य विशेषताएं 1.।डिजिटल-फर्स्ट एप्रोच टू लर्निंग प्रौद्योगिकी के बढ़ते महत्व को पहचानते हुए, ठएढ 2025 अक्र संचालित ऑनलाइन शिक्षण प्लेटफार्मों, स्मार्ट कक्षाओं और आभासी प्रयोगशालाओं को मुख्यधारा की शिक्षा में एकीकृत करता है। ध्यान शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में छात्रों के लिए उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा को सुलभ बनाने पर है।

2.। कौशल-आधारित और व्यावसायिक शिक्षा नीति व्यावहारिक कौशल, उद्यमिता और उद्योग-प्रासंगिक प्रशिक्षण पर अधिक जोर देती है। स्कूल और कॉलेज अब पेश करेंगेः

कक्षा 6 से अनिवार्य कोडिंग और डेटा विज्ञान पाठ्यक्रम। एआई, रोबोटिक्स और ग्रीन टेक्नोलॉजी जैसे उभरते क्षेत्रों में व्यावसायिक प्रशिक्षण। प्रमुख कंपनियों के सहयोग से इंटर्नशिप और प्रशिक्षु। 3। बहु-विषयक उच्च शिक्षा मॉडल वैश्विक शिक्षा प्रणालियों से प्रेरित, एनईपी 2025 अंतःविषय सीखने को बढ़ावा देता है। विश्वविद्यालय अब छात्रों को संगीत के साथ इंजीनियरिंग, या पर्यावरण विज्ञान के साथ अर्थशास्त्र जैसे विविध विषयों को संयोजित करने की अनुमति देंगे।

4। बोर्ड परीक्षाओं में बड़े बदलाव परीक्षा के तनाव और रटने की शिक्षा को कम करने के लिए, कक्षा 10 और 12 की बोर्ड परीक्षाएं अब एक मॉड्यूलर दृष्टिकोण का पालन करेंगी, संस्मरण के बजाय वैचारिक ज्ञान का परीक्षण करेंगी। इसके अतिरिक्त, छात्र अपने स्कोर को बेहतर बनाने के लिए वर्ष में दो बार बोर्ड परीक्षा दे सकते हैं।

5.। क्षेत्रीय भाषा शिक्षा का विस्तार भारत की भाषाई विविधता के साथ संरेखित करते हुए, एनईपी 2025 जनादेश देता है कि उच्च शिक्षा संस्थान क्षेत्रीय भाषाओं में पाठ्यक्रम प्रदान करते हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि सभी पृष्ठभूमि के छात्रों के समान अवसर हों।

6। अनुसंधान और नवाचार पर बढ़ा फोकस एनईपी 2025 विज्ञान, प्रौद्योगिकी और सामाजिक विज्ञान में नवाचार को प्रोत्साहित करने के लिए राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र स्थापित करता है। छात्रों और युवा विद्वानों का समर्थन करने के लिए पीएचडी और स्नातकोत्तर अनुसंधान कार्यक्रमों के लिए अनुदान भी बढ़ाया गया है।

कम परीक्षा दबावः एक मॉड्यूलर बोर्ड परीक्षा संरचना तनाव को कम करती है और सीखने के परिणामों में सुधार करती है। ग्रेटर ग्लोबल अवसरः भारतीय डिग्री क्रेडिट-आधारित शिक्षण प्रणाली को अपनाने के साथ अधिक अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त करेगी। चुनौतियां और कार्यान्वयन रोडमैप जबकि एनईपी 2025 सुधार महत्वाकांक्षी हैं, बुनियादी ढांचे के विकास, शिक्षक प्रशिक्षण और डिजिटल पहुंच जैसी चुनौतियां बनी हुई हैं। सरकार ने सभी शैक्षणिक संस्थानों में सुचारू अनुकूलन सुनिश्चित करते हुए पांच साल की चरणबद्ध कार्यान्वयन योजना की घोषणा की है।

निष्कर्षः भारतीय शिक्षा के लिए एक नया युग भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2025 एक अधिक समावेशी, लचीली और कौशल-उन्मुख शिक्षा प्रणाली की ओर एक शानदार कदम है। डिजिटल लर्निंग, अंतःविषय शिक्षा और कौशल-आधारित प्रशिक्षण को एकीकृत करके, एनईपी 2025 का उद्देश्य तेजी से विकसित होने वाले नौकरी बाजार के लिए छात्रों को लैस करना है।

(लेखक शैक्षिक स्तंभकार हैं)

कामकाजी महिलाओं की चुनौतियां

राजेश कुमार सिन्हा
वरिष्ठ स्तंभकार

आज महिलाओं की दुनिया सिर्फ घर तक ही सीमित नहीं है बल्कि समय के साथ साथ समाज में महिलाओं की भूमिका भी बदल गई है। वे अब केवल घर तक सीमित नहीं हैं, बल्कि कार्यक्षेत्र में भी अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। आज की महिलाएं डॉक्टर, इंजीनियर, शिक्षक, उद्यमी, प्रशासनिक अधिकारी और कॉर्पोरेट जगत की शीर्ष पदों पर कार्य कर रही हैं। लेकिन इसके बावजूद, उनकी पारिवारिक ज़िम्मेदारियां कम नहीं हुईं। वे एक साथ दो भूमिकाओं का निर्वहन कर रही हैं—एक कुशल प्रोफेशनल और दूसरी एक आदर्श गृहिणी के रूप में। इस दोहरी भूमिका को निभाते हुए वे कई चुनौतियों का सामना करती हैं, जिनमें समय प्रबंधन, सामाजिक अपेक्षाएं, मानसिक तनाव और कार्यस्थल पर भेदभाव जैसी समस्याएं शामिल हैं। आज कामकाजी महिलाओं के सामने सबसे बड़ी चुनौती पारिवारिक और प्रोफेशनल जिम्मेदारियों के बीच संतुलन बनाए रखना है। पारिवारिक जीवन में उनकी भूमिका पत्नी, माँ, बहू, बेटी और बहन के रूप में अनेक अपेक्षाएं रखती है। उनसे यह आशा की जाती है कि वे बच्चों की परवरिश, घर की देखभाल और रिश्तेदारों के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को पूरी निष्ठा से निभाएं। दूसरी ओर, कार्यस्थल पर उनसे पूर्ण समर्पण की अपेक्षा की जाती है।

कई बार महिलाएँ अपने प्रोफेशनल दायित्वों के चलते पारिवारिक ज़िम्मेदारियों को पर्याप्त समय नहीं दे पातीं, जिससे उन्हें अपराधबोध महसूस होता है। वहीं, यदि वे परिवार को अधिक समय देती हैं, तो उनका करियर प्रभावित होता है। यह मानसि-

ाक तनाव उनके स्वास्थ्य और कार्यक्षमता दोनों पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

इसमें कोई दो राय नहीं कि समाज में प्रगति हुई है, लेकिन अब भी कई कार्यस्थलों पर महिलाओं के साथ लैंगिक भेदभाव देखा जाता है। उन्हें पुरुषों की तुलना में कम वेतन दिया जाता है, जबकि वे समान कार्य करती हैं। नेतृत्व के उच्च पदों पर महिलाओं की संख्या अपेक्षाकृत कम है, और निर्णय-निर्माण की प्रक्रियाओं में उनकी भागीदारी सीमित होती है।इसके अलावा, मातृत्व अवकाश और पारिवारिक ज़िम्मेदारियों के कारण कई महिलाओं को करियर में रुकावटों का सामना करना पड़ता है। कई कंपनियों में मातृत्व अवकाश के बाद महिलाओं की पदोन्नति प्रभावित होती है या उन्हें कम महत्वपूर्ण भूमिकाओं में स्थानांतरित कर दिया जाता है। यह सच है कि घर और कार्यस्थल की दोहरी जिम्मेदारियों के कारण महिलाओं को अत्यधिक मानसिक और शारीरिक तनाव झेलना पड़ता है। लंबे कार्य घंटों के बाद घर आकर घरेलू कार्यों में व्यस्त रहना उनके लिए अत्यंत थकाऊ होता है। कई बार वे अपने स्वास्थ्य और आत्म-देखभाल को नजरअंदाज कर देती हैं, जिससे वे तनाव, अवसाद, उच्च रक्तचाप और अन्य स्वास्थ्य समस्याओं का शिकार हो जाती हैं।

इसके अतिरिक्त, समाज में महिलाओं से यह अपेक्षा की जाती है कि वे हर परिस्थिति में संयम बनाए रखें और अपने कार्यों को पूरी कुशलता से संपन्न करें। यह मानसिक दबाव कई बार उनके आत्मविश्वास को भी प्रभावित करता है।मातृत्व महिलाओं के जीवन का एक महत्वपूर्ण चरण होता है, लेकिन यह उनके करियर के लिए एक चुनौती भी बन जाता है। बच्चों की देखभाल और पालन-पोषण की प्राथमिक ज़िम्मेदारी अब भी महिलाओं पर अधिक होती है। कई महिलाएं मातृत्व के बाद कार्यस्थल पर लौटने में कठिनाई महसूस करती हैं, क्योंकि उन्हें बच्चे की देखभाल और करियर के बीच संतुलन बनाना होता है।

कई देशों में डे-केयर सुविधाएं और पितृत्व अवकाश की व्यवस्था है, लेकिन भारत में यह अब भी सीमित स्तर पर उपलब्ध है। इसके अभाव में महिलाओं को या तो करियर से ब्रेक लेना पड़ता है या फिर अत्यधिक तनाव में रहकर दोनों भूमिकाओं को निभाना पड़ता है।आज भी कई परिवारों में कामकाजी महिलाओं को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। यह धारणा बनी हुई है कि महिलाओं का प्राथमिक दायित्व घर और परिवार की देखभाल करना है। कई बार कामकाजी महिलाओं को यह सुनना पड़ता है कि वे अपने बच्चों और परिवार के लिए पर्याप्त समय नहीं निकाल रही हैं।रात की शिफ्ट में काम करने वाली महिलाओं के लिए यह चुनौती और बढ़ जाती है, क्योंकि उनके देर रात तक बाहर रहने को सामाजिक रूप से स्वीकार नहीं किया जाता। कई मामलों में परिवारों में भी महिलाओं की स्वतंत्रता को सीमित कर दिया जाता है, जिससे उनकी कार्यक्षमता प्रभावित होती है।

कामकाजी महिलाओं के लिए सुरक्षा भी एक बड़ी चिंता का विषय है। कार्यस्थल, यात्रा और देर रात तक काम करने के दौरान उन्हें यौन उत्पीड़न और असुरक्षा का सामना करना पड़ता है। कई महिलाएं भय और सामाजिक कलंक के डर से उत्पीड़न के मामलों की रिपोर्ट नहीं कर पातीं। हालांकि कार्यस्थलों पर ‘विशाखा गाइडलाइंस’ और महिलाओं की सुरक्षा के लिए कई कानून बनाए गए हैं, लेकिन इनका प्रभावी क्रियान्वयन अब भी एक चुनौती बना हुआ है। कई ऐसे मामले भी सुनने में आते हैं जहां वरिष्ठ अधिकारियों के यौन उत्पीड़न में संलग्न होने के कारण उन्हें उचित न्याय नहीं मिल पाता है। हालांकि कामकाजी महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त होती है, लेकिन कई मामलों में उनके वेतन पर पुरुषों का नियंत्रण रहता है। पारिवारिक निर्णयों में महिलाओं की भागीदारी कम होती है, और वे अपने वित्तीय अधिकारों के प्रति उतनी जागरूक नहीं होतीं।

इसके अलावा, कई कार्यस्थलों पर महिलाओं को पुरुषों की तुलना में कम वेतन दिया जाता है, जो लैंगिक असमानता को दर्शाता है। कामकाजी महिलाओं की इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए समाज और कार्यस्थलों में कुछ महत्वपूर्ण सुधार आवश्यक हैं। सबसे पहले, कार्यस्थलों पर समान वेतन, लचीले कार्य घंटे और मातृत्व तथा पितृत्व अवकाश की बेहतर सुविधाएँ उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

इसके अलावा, परिवारों में भी यह मानसिकता विकसित करने की आवश्यकता है कि घर और बच्चों की ज़िम्मेदारी केवल महिलाओं की नहीं, बल्कि पुरुषों की भी है। यदि पुरुष भी घरेलू कार्यों में भागीदारी बढ़ाएँ, तो महिलाओं का मानसिक और शारीरिक तनाव कम हो सकता है।महिलाओं को वित्तीय प्रबंधन और आत्म-निर्भरता के लिए जागरूक किया जाना चाहिए, ताकि वे अपने आर्थिक फैसले स्वयं ले सकें। साथ ही, कार्यस्थलों और सार्वजनिक स्थानों पर महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए सख्त कानूनों का पालन किया जाना चाहिए।कामकाजी महिलाओं की दोहरी भूमिका समाज के विकास में एक महत्वपूर्ण स्तंभ है। वे न केवल अपने परिवार की आर्थिक स्थिति को मजबूत कर रही हैं, बल्कि समाज में भी अपनी सशक्त पहचान बना रही हैं। हालांकि, उन्हें पारिवारिक और कार्यस्थल की ज़िम्मेदारियों के बीच संतुलन बनाने में कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।सामाजिक सोच में बदलाव, कार्यस्थल की अनुकूल नीतियाँ, और महिलाओं की वित्तीय एवं कानूनी जागरूकता बढ़ाकर इन चुनौतियों को कम किया जा सकता है। जब महिलाएँ आत्मनिर्भर और समर्थ होंगी, तो समाज भी अधिक समृद्ध और सशक्त होगा। बेशक, ‘महिलाओं के योगदान को मान्यता देना और उन्हें समान अवसर प्रदान करना ही एक प्रगतिशील समाज की पहचान है।’

(लेखक के अपने विचार हैं)

फिनलैंड की तरह

सुनील कुमार महला
वरिष्ठ स्तंभकार

जीवन फूलों की सेज नहीं है। यहां यह पल कहीं न कहीं संघर्ष है, परेशानियां हैं,कष्ट हैं,लेकिन इन संघर्षों, परेशानियों और कष्टों में भी जो व्यक्ति हमेशा सकारात्मक सोच और ऊर्जा से जीवन को बहुत ही सहजता, धैर्य,संयम और खुशी(प्रसन्नता) से जीता है, वही तो वास्तव में असली जीवन है। वास्तव में, जीवन के हर क्षण में आनंद और संतोष का अनुभव करना ही प्रसन्नता है। महात्मा गांधी जी ने कहा है कि 'प्रसन्नता तब होती है जब आप जो सोचते हैं, जो कहते हैं और जो करते हैं, सब एक साथ हों।' यह ठीक है कि व्यक्ति जब किसी उपलब्धि विशेष, सफलता को प्राप्त कर लेता है तो उसे खुशी या प्रसन्नता का अनुभव होता है, लेकिन यदि वास्तव में देखा जाए तो किसी उपलब्धि या स्थिति विशेष तक पहुंचना ही खुशी नहीं है। दर-असल, खुशी या प्रसन्नता का भाव हमेशा अंतर्मन में निहित होता है, यह(खुशी) आंतरिक होती है, बाह्य नहीं। संपत्ति, पद और प्रतिष्ठा(नेम एंड फेम) या सफलता प्राप्त करना ही खुशी या प्रसन्नता नहीं है, यह इससे भी ऊपर थोड़ा हटकर है। खूब सारी संपत्ति हमें प्रसन्नता दे सकती है, इसी तरह से प्रतिष्ठा से भी हमें खुशी का अहसास हो सकता है, लेकिन यदि प्रसन्नता का भाव देखा जाए तो यह भौतिकता में तो कतई नहीं है। वास्तव में, यह हमारे भावनात्मक और मानसिक दृष्टिकोण पर निर्भर करती है। असल में हमारे भीतर (अंतर्मन) की शांति और संतोष ही असली प्रसन्नता है।हाल ही में 'विश्व प्रसन्नता रिपोर्ट' जारी की गई है। पाठकों को बताता चलूं कि 20 मार्च 2025 को यह रिपोर्ट जारी की गई है, जो यह बताती है कि खुशी सूचकांक में भारत का स्कोर 10 में से 4.389 पर आ गया है, जो पहले 4.054 था। निश्चित रूप से स्कोर बढ़ा है, लेकिन खुशी इतनी नहीं। मामूली सी बढ़ोत्तरी हुई है इसमें।यहां यह भी गौरतलब है कि ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के वेलबींग रिसर्च सेंटर ने गैलप, संयुक्त राष्ट्र सतत विकास समाधान नेटवर्क के साथ साझेदारी में वर्ल्ड हैप्पीनेस डे (20 मार्च) पर वर्ल्ड हैप्पीनेस रिपोर्ट (डब्ल्यू एच आर) 2025 जारी की है। इस रिपोर्ट में जिन 147 देशों का विश्लेषण शामिल किया गया, उनमें भारत 118वें नंबर है। हालांकि, यह रैंकिंग अभी भी भारत को यूक्रेन, मोजाम्बिक और इराक सहित कई संघर्ष-प्रभावित देशों से पीछे रखती है। पूर्व में 143 देशों में यह 126वें स्थान पर था। मतलब यह है कि भारतीय लोग पिछले सालों की तुलना में अब थोड़ा सा अधिक प्रसन्न रहने लगे हैं। यानी विश्व में खुश रहने के मामले में भारत की रैंकिंग में कुछ सुधार तो हुआ है, लेकिन यहां यह गौरतलब है कि हमारे पड़ोसी नेपाल (92) और पाकिस्तान (109) प्रसन्नता के मामले में हमसे आगे हैं। क्या यह आश्चर्यजनक बात नहीं है कि जो पाकिस्तान लगातार आर्थिक चुनौतियों, महंगाई, आतंकवाद और अराजकता से जूझ रहा है, वह भी प्रसन्नता के मामले में हमारे देश से आगे है ? रिपोर्ट बताती है कि पाकिस्तान का प्रदर्शन भारत से बेहतर रहा है। पाठकों को बताता चलूं कि हैप्पीनेस इंडेक्स पर उसका स्कोर 4.657 से बढ़कर इस बार 4.768 दर्ज किया गया है, लेकिन उसकी रैंकिंग 108 से गिरकर 109 पर आ गई है। यहां पाठकों को बताता चलूं कि विभिन्न देशों की प्रसन्नता पर आधारित यह रैंकिंग लोगों के जीवन मूल्यांकन के तीन वर्षों के औसत से तैयार की जाती है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इस 'खुश स्कोर' में भिन्नता की व्याख्या करने के लिए रिपोर्ट में प्रति व्यक्ति जीडीपी, स्वस्थ जीवन प्रत्याशा, सामाजिक स्थिति, जीवन जीने की आजादी, उदारता और भ्रष्टाचार जैसे छह संकेतकों को मापा जाता है, लेकिन खुशहाली रैंकिंग इन छह कारकों में से किसी पर भी आधारित नहीं होती है। बहरहाल, यहां पाठकों को यह जानकारी देना चाहूंगा कि प्रति व्यक्ति आय जैसे गणनात्मक पैमाने पर भारत की स्थिति पाकिस्तान से कहीं बेहतर दर्शाई गई है। विश्व बैंक के आंकड़ों के अनुसार भारत में जहां वर्ष 2023 में प्रति व्यक्ति आय जहां 2,480.8 डॉलर रही, वहीं पाकिस्तान में यह 1,365.3 डॉलर के स्तर पर ही अटक गई। यहां गौरतलब है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट मं कहा गया है कि वर्ष 2021 में पाकिस्तान की स्वास्थ्य जीवन प्रत्याशा (जन्म के समय) जहां 56.9 साल थी, वहीं भारत की स्वास्थ्य जीवन प्रत्याशा 58.1 साल थी। इसके अतिरिक्त ट्रांसपैरेंसी इंटरनेशनल से जारी भ्रष्टाचार धारणा सूचकांक, 2024 रिपोर्ट में भ्रष्टाचार के मामले में पाकिस्तान जहां 135वें नंबर रहा, वहीं भारत का स्थान इसमें 96वां था। बहरहाल, यदि हम यहां 'विश्व प्रसन्नता रिपोर्ट' में टॉपर्स की लिस्ट की बात करें तो एकबार फिर फिनलैंड (लगातार आठवीं बार) नंबर एक पर कायम है। गौरतलब है कि फिनलैंड ने 7.74 का प्रभावशाली औसत स्कोर किया, जिससे वैश्विक स्तर पर सबसे खुशहाल राष्ट्र के रूप में अपनी पोजीशन बरकरार रखी है। जानकारों के अनुसार फिनलैंड में दिन में केवल चार घंटे सूरज निकलता है। यहां बहुत ठंड का मौसम रहता है, लेकिन कितनी बड़ी बात है इन सब विकट परिस्थितियों के बावजूद फिनलैंड के लोग दुनिया में सबसे प्रसन्न हैं।सूची में फिनलैंड के बाद डेनमार्क, आइसलैंड, नीदरलैंड,कोस्टा रीका,नार्वे , इजरायल, लक्जमबर्ग, मेक्सिको और स्वीडन का स्थान है। वास्तव में,इन देशों ने अपनी स्ट्रांग सोशल सपोर्ट सिस्टम, हाई स्टैंडर्ड ऑफ लीविंग और वर्क-लाइफ बैलेंस के प्रति प्रतिबद्धता के कारण लगातार खुशी रिपोर्ट में टॉप रैंक को प्राप्त किया है।दिलचस्प बात यह है कि कोस्टा रिका और मैक्सिको ने शीर्ष 10 में अपनी शुरूआत की, क्रमशः 6वां और 10वां स्थान हासिल किया। वहीं पर दूसरी ओर, संयुक्त राज्य अमेरिका 24वें स्थान पर अपनी सबसे निचली रैंकिंग पर आ गया, वहीं पर यूनाइटेड किंगडम 23वें स्थान पर है। रिपोर्ट में चीन 68वें स्थान पर रखा गया है।पाठकों को जानकारी देना चाहूंगा दक्षिण

एशियाई देशों में म्यांमार (126वां), श्रीलंका (133वां), बांग्लादेश (134वां) का स्थान पर रखे गए हैं। वहीं पर अफगानिस्तान (147वां) (लगातार चौथे वर्ष) स्थान पर है। वास्तव में, अफगानिस्तान को दुनिया का सबसे दुखी देश माना गया है। देश की निम्न रैंकिंग का मुख्य कारण अफगान महिलाओं द्वारा सामना किए जाने वाले संघर्ष हैं, जिन्होंने बताया कि उनका जीवन लगातार कठिन होता जा रहा है।अन्य देशों में क्रमशः सिएरा लियोन (146वां), लेबनान (145वां), मलावी (144वाँ) और ज़िम्बाब्वे (143वां) का प्रदर्शन सबसे निम्नतम रहा है। वास्तव में,अफगानिस्तान के बाद, सिएरा लियोन और लेबनान क्रमशः दूसरे और तीसरे सबसे दुखी देश हैं। इन देशों ने संघर्ष, गरीबी और सामाजिक अशांति सहित महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना किया है। पाठकों को बताता चलूं कि यह रैंकिंग लोगों के जीवन मूल्यांकन के 3-वर्षीय औसत पर आधारित है, जिसमें प्रतिक्रियादाता अपने वर्तमान जीवन को 0 से 10 के पैमाने पर रेट करते हैं। यहां यदि हम हैप्पीनेस के निर्धारक कारकों की बात करें तो इनमें क्रमशः विश्वास, सामाजिक संबंध, शेयर्ड मील और सामुदायिक दयालुता जैसे कारक शामिल हैं, जो सामान्यतः धन से भी अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। गौरतलब है कि वर्ष 2025 में विश्व प्रसन्नता दिवस की थीमः 'केयरिंग एंड शेयरिंग' रखी गई थी तथा 'वर्ल्ड हैप्पीनेस डे' (विश्व प्रसन्नता दिवस) की पहल सर्वप्रथम भूटान द्वारा की गई थी, जिसने 1970 के दशक से ही ग्रॉस नेशनल हैप्पीनेस (जीएनएच) को जीडीपी से अधिक प्राथमिकता दी है। यहां पाठकों को यह भी बताता चलूं कि जुलाई 2012 में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 20 मार्च को 'वर्ल्ड हैप्पीनेस डे' के रूप में मनाने का निर्णय अंगीकृत किया गया था। बहरहाल, यहां प्रश्न यह उठता है कि आखिर हमारा देश प्रसन्नता के मामले में इतना पीछे क्यों है ? जबकि हमारे देश की स्थिति नेपाल और पाकिस्तान से तो हर मायने में बहुत ज्यादा बेहतर है। दरअसल, इसके पीछे कुछ कारण निहित हैं। कारण यह है कि आज हम अपनी परेशानियों को ज्यादा बड़ा बना कर देखते हैं। यह भी कि हमारे देश में 'जीवन की स्वतंत्रता' के पैमाने अन्य देशों की तुलना में कुछ अलग हैं, जिनको शायद इस रिपोर्ट में शामिल नहीं किया गया, इसलिए हम प्रसन्नता के मामले में पाकिस्तान और नेपाल जैसे देशों से भी पिछड़ गए। आज हम प्रकृति के भी उतने निकट नहीं रह गये हैं,जितने कि आज से पच्चीस तीस पहले थे।बहरहाल, वास्तव में यह क्रूर मजाक नहीं तो और क्या है कि युद्धों में मटियामेट फिलिस्तीनी और यूक्रेनी लोग भी भारतीयों से कहीं ज्यादा खुशहाल व प्रसन्न हैं। बहरहाल, हमें यहां जरूरत इस बात की है कि प्रसन्नता के मामले में हम फिनलैंड से कुछ सीखें। कहना गलत नहीं होगा कि फिनलैंड दुनिया भर में खुशी के सूचकांक में हर बार शीर्ष पर रहता है। संभवतः, यह प्रवृत्ति इसलिए है, क्योंकि फिनलैंड के लोग सरल सुखों का आनंद लेते हैं- जैसे स्वच्छ हवा , शुद्ध पानी और जंगल में घूमना -पूरी तरह से, लेकिन हमारे यहां दूसरी चीजें हैं। मसलन, हम घंटों घंटों तक ट्रैफिक जाम में फंसे रहते हैं, लोकल ट्रेनों में धक्के खा रहे होते हैं। हमारे यहां प्रदूषण का स्तर भी कुछ कम नहीं है। हमारे यहां मेट्रो सीटीज में बहुत प्रदूषण है। शहरों में अस्वच्छता भी है।हमारे यहां आज भी भ्रष्टाचार की जड़ें काफी गहरी हैं, लेकिन फि नलैंड में सब कुछ ठीक चलता है; मसलन, वहां पर सार्वजनिक सेवाएँ सुचारू रूप से चलती हैं, अपराध और भ्रष्टाचार का स्तर कम है, और सरकार और जनता के बीच एक अर्जित विश्वास है। यह सब मिलकर एक कार्यशील समाज और सभी का ख्याल रखने की संस्कृति बनाने के लिए काम करता है। फि नलैंड में 40 से ज्यादा राष्ट्रीय उद्यान हैं, जो हाइकिंग रूट, नेचर ट्रेल और कैम्पफायर साइट्स से भरे हुए हैं, जहाँ आप तारों के नीचे एक रात बिता सकते हैं। फि नलैंड के सभी जंगल अलग-अलग आकार और साइज में आते हैं ; हरे-भरे दक्षिणी जंगलों से लेकर उत्तर के आर्कटिक अजूबों तक, बहुमुखी प्रतिभा और विविधता खिलती है। प्रकृति से लोगों का विशेष जुड़ाव है,जो उन्हें प्रसन्न और खुश रहने में मदद करता है।हम भारतीयों को यह बात अपने जेहन में रखनी चाहिए कि प्रकृति के साथ निकटता रचनात्मकता और नवीनता को बढ़ावा देती है।वास्तव में, कहना गलत नहीं होगा कि फि नलैंड की कम तनाव वाली जीवनशैली रचनात्मकता को बढ़ावा देती है, जिससे यह दुनिया के सबसे नवोन्मेषी देशों में से एक बन गया है। सच तो यह है कि फिनलैंड की खुशहाली का कारण, वहां के समाज में विश्वास और स्वतंत्रता का उच्च स्तर है। फिनलैंड के सबसे अधिक खुश व प्रसन्न होने के पीछे एक कारण यहां की आबादी भी है। दरअसल,आबादी कम होने के कारण लोगों को मिलने वाली सुविधाएं काफी अच्छी होती हैं। यह भी कि फिनलैंड के निवासी अपने पड़ोसियों से अपनी तुलना नहीं करते हैं। कहना गलत नहीं होगा कि सच्ची खुशी की ओर पहला कदम दूसरों से अपनी तुलना करने के बजाय अपने खुद के मानक निर्धारित करना है, जो कि फिनलैंड के लोगों ने करके दिखाया है। इतना ही नहीं,फिनलैंड के निवासी न तो प्रकृति के लाभों को नजरअंदाज करते हैं और न ही विश्वास का कम्यूनिटी सर्कल को तोड़ते हैं, इसलिए वे हमेशा खुश और प्रसन्न रहते हैं। कहना गलत नहीं होगा फिनलैंड में काम-जीवन संतुलन पर बहुत जोर दिया जाता है, जिसमें काम के घंटे कम करना, माता-पिता को छुट्टी देने की उदार नीतियाँ और पर्याप्त छुट्टी का समय शामिल है। यह दृष्टिकोण फिन्स को अवकाश, परिवार और व्यक्तिगत गतिविधियों को प्राथमिकता देने की अनुमति देता है, जिससे समग्र कल्याण और संतुष्टि को बढ़ावा मिलता है। इतना ही नहीं, फिनलैंड की शिक्षा प्रणाली समानता, सुलभता और बालकों के समग्र विकास को प्राथमिकता देती है। फिनलैंड में लैंगिक समानता, महिला सशक्तीकरण, एक समावेशी समाज में योगदान करते हैं। यहां की सौना संस्कृति भी उनकी(फिनलैंड वासियों) प्रसन्नता का एक बड़ा कारण है। पाठकों को जानकारी देना चाहूंगा कि सौना, फिनिश संस्कृति में एक विशेष स्थान रखता है, जो विश्राम, सामाजिक मेलजोल और कायाकल्प के लिए एक पोषित परंपरा के रूप में कार्य करता है। देश में तीन मिलियन से अधिक सौना के साथ, फिनिश लोग सौना स्नान को अपने स्वास्थ्य का एक मूलभूत पहलू मानते हैं, जो सामाजिक संबंधों और अपनेपन की भावना को बढ़ावा देते हुए शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है। इतना ही नहीं, फिनलैंड में भ्रष्टाचार का स्तर दुनिया में सबसे कम है, जिससे सार्वजनिक संस्थाओं में विश्वास बढ़ता है और नागरिकों में निष्पक्षता और न्याय की भावना को बढ़ावा मिलता है। पारदर्शिता, जवाबदेही और नैतिक शासन फिनलैंड की एक भरोसेमंद और विश्वसनीय समाज के रूप में प्रतिष्ठा में योगदान करते हैं। फिनलैंड में समुदाय में भावना बहुत ही प्रबल है। वास्तव में,फिनिश समाज समुदाय और सामूहिक कल्याण पर बहुत जोर देता है। घनिष्ठ पड़ोस से लेकर जीवंत सामाजिक मंडलियों तक, फिनिश लोग रिश्तों, एकजुटता और आपसी सहयोग को प्राथमिकता देते हैं, जिससे एक दूसरे से जुड़ाव और जुड़ाव की भावना पैदा होती है जो समग्र खुशी को बढ़ाती है। अंत में यही कहूंगा कि यदि हमें भी प्रसन्नता में नंबर वन बनना है तो हमें फिनलैंड से प्रेरणा लेते हुए बहुत से सुधार अपने यहां करने होंगे तभी हम प्रसन्नता सूचकांक में सिरमौर देश बन सकते हैं।

(लेखक फ्रीलांस राइटर व युवा साहित्यकार हैं।)

गोंडी विद्यालय की बंदी मतलब आदिवासी संस्कृति के अस्तित्व को खतरा

प्रियंका सौरभ
स्तंभकार

महाराष्ट्र में गोंडी-माध्यम विद्यालय का बंद होना भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए संवैधानिक अधिकारों को लागू करने में कठिनाइयों को उजागर करता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 350अ के अनुसार राज्यों को भाषाई अल्पसंख्यक बच्चों की मूल भाषा में प्राथमिक शिक्षा प्रदान करनी होती है, लेकिन विभिन्न प्रशासनिक, वित्तीय और सामाजिक-राजनीतिक बाधाएं अक्सर इस लक्ष्य को बाधित करती हैं। जनजातीय भाषाएं और संस्कृतियां पहचान, इतिहास और पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों से निकटता से जुड़ी हुई हैं। किसी भाषा के खत्म होने का मतलब है दुनिया के बारे में एक अलग दृष्टिकोण का गायब होना। वैश्वीकरण, जबरन आत्मसात करने और अपर्याप्त औपचारिक मान्यता के कारण कई जनजातीय भाषाएं खतरे में हैं। इसके अतिरिक्त, सांस्कृतिक विरासत-जिसमें अनुष्ठान, कला, लोकगीत और पारंपरिक प्रथाएं शामिल हैं, को पलायन, वनों की कटाई और आधुनिकीकरण से खतरा है। जबकि भारतीय संविधान अनुच्छेद 350अ के माध्यम से भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करता है, जो मातृभाषा शिक्षा को अनिवार्य बनाता है, मैसूर में केंद्रीय भारतीय भाषा संस्थान की रिपोर्ट है कि पिछले 50 वर्षों में 220 से अधिक भाषाएं लुप्त हो गई हैं, जिनमें से कई स्वदेशी भाषाओं को शैक्षिक समर्थन की कमी है।

गोंडी-माध्यम विद्यालयों का बंद होना भाषाई विरासत को संरक्षित करने के लिए चल रहे संघर्ष को उजागर करता है। अनुच्छेद 29 अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति को बनाए रखने का अधिकार देता है, जो जबरन आत्मसात करने से रोकने में मदद करता है और शिक्षा और शासन दोनों में सांस्कृतिक विविधता को बढ़ावा देता है। सर्वोच्च न्यायालय ने टी.एम.ए. पाई फाउंडेशन मामले में भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों को सुदृढ़ किया, शैक्षिक संस्थानों के प्रबंधन में उनकी स्वतंत्रता की पुष्टि की। अनुच्छेद 350अ के तहत राज्यों को बच्चों की मूल भाषाओं में प्राथमिक शिक्षा का समर्थन करने की आवश्यकता होती है, जिससे भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए सीखने के परिणामों में सुधार होता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 बहुभाषी शिक्षा की वकालत करती है, जिसमें बचपन में मातृभाषा आधारित शिक्षा पर जोर दिया

जाता है। आठवीं अनुसूची 22 भाषाओं को मान्यता देती है, जिससे भाषाई विकास के लिए राज्य का समर्थन सुनिश्चित होता है; हालांकि, गोंडी और भीली जैसी महत्त्वपूर्ण आदिवासी भाषाएं उल्लेखनीय रूप से अनुपस्थित हैं। जबकि लगभग 25, 000 लोगों द्वारा बोली जाने वाली संस्कृत को आठवीं अनुसूची में शामिल किया गया है, लगभग 2.9 मिलियन बोलने वालों वाली गोंडी को शामिल नहीं किया गया है, जो व्यवस्थित बहिष्कार के पैटर्न को दशार्ता है। आदिवासी क्षेत्रों में स्वायत्त शासन और सांस्कृतिक संरक्षण की आवश्यकता है, जिसमें शिक्षा और भाषा नीतियों के प्रबंधन का अधिकार भी शामिल है। हालांकि पूर्वोत्तर में स्वायत्त ज़िला परिषदें आदिवासी भाषाओं का समर्थन करती हैं, लेकिन मध्य भारत में समान सुरक्षा का अभाव है।

1996 का ₹पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम₹ आदिवासी स्वशासन के महत्त्व को स्वीकार करता है, ग्राम सभाओं को सांस्कृतिक और शैक्षिक मुद्दों के बारे में निर्णय लेने का अधिकार देता है, जिससे संवैधानिक सुरक्षा मजबूत होती है। हालाँकि, मोहगाँव ग्राम पंचायत द्वारा गोंडी-माध्यम विद्यालय स्थापित करने के प्रस्ताव को नौकरशाही नियमों के कारण खारिज कर दिया गया था। गोंडी-माध्यम विद्यालय को बंद करना इस बात पर प्रकाश डालता है कि कैसे अनम्य प्रशासनिक प्रथाएँ आदिवासी स्वायत्तता को कमजोर कर सकती हैं, जिसके परिणामस्वरूप उनकी मूल भाषा में शिक्षा की कमी होती है। हालाँकि शिक्षा के अधिकार के दिशा-निदेर्शों का उपयोग स्कूल को बंद करने को सही ठहराने के लिए किया गया था, लेकिन संवैधानिक प्रावधान हैं जो स्थानीय शासन का समर्थन करते हैं। आदिवासी भाषाओं को अक्सर संस्थानों द्वारा अनदेखा किया जाता है, जो संस्कृत और हिन्दी जैसी भाषाओं को दिए जाने वाले समर्थन के विपरीत है, जो सामाजिक-राजनीतिक हाशिए के पैटर्न को दशार्ता है। गोंडी-माध्यम की पाठ्यपुस्तकों के लिए न्यूनतम धन उपलब्ध है, जबकि संस्कृत को राज्य का काफी समर्थन प्राप्त है। आठवीं अनुसूची से आदिवासी भाषाओं को बाहर करने से उनका विकास बाधित होता है, जिससे उनके लुप्त होने का खतरा है। जबकि 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति' 2020 संस्कृत संस्थानों को बढ़ावा देता है, आदिवासी भाषाओं के लिए कोई समान ढांचा नहीं है। इसके अतिरिक्त, आदिवासी भाषाएं औपचारिक नौकरी के अवसरों से जुड़ी नहीं हैं, जो शिक्षा में उनके महत्त्व को कम करती हैं। नौकरी की आवश्यकताओं में आमतौर पर हिन्दी या अंग्रेजी को प्राथमिकता दी जाती है, जिससे आदिवासी भाषाओं में शिक्षा कम आकर्षक हो जाती है।

ऐसी स्कूल बंद होने से आदिवासी पहचान के लिए एक बड़ा जोखिम पैदा होता है, जो मौखिक परंपराओं और सांस्कृतिक साझाकरण में गहराई से निहित है, जिसके परिणामस्वरूप भाषा का संभावित नुकसान हो सकता है। शहरीकरण और वनों की कटाई ने पहले ही आदिवासी कहानी कहने की प्रथा को कम कर दिया है और स्कूलों के बंद होने से यह गिरावट और तेज हो गई है। हालांकि 'पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम' स्वायत्तता की एक हद तक सुविधा प्रदान करता है, लेकिन स्थानीय निर्णय, जैसे कि मोहगाँव द्वारा अपने स्कूल के बारे में लिए गए निर्णय, अक्सर अनदेखा कर दिए जाते हैं, जो जमीनी स्तर पर शासन को कमजोर करता है। कानूनी समर्थन के साथ भी, भाषा और शिक्षा से संबंधित आदिवासी निर्णयों को अक्सर ज़िला प्रशासन के विकल्पों से दरकिनार कर दिया जाता है। अतिरिक्त भाषाओं को मान्यता देने की प्रक्रिया राजनीति में फंसी हुई है और धीमी गति से आगे बढ़ रही है, जिससे आदिवासी भाषाओं की मान्यता में बाधा आ रही है। उदाहरण के लिए, बोडो को व्यापक वकालत के बाद 2003 में आधिकारिक तौर पर मान्यता दी गई थी, फिर भी बड़ी संख्या में बोलने वालों के बावजूद गोंडी को मान्यता नहीं मिली है। जबकि न्यायालयों ने भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों की पुष्टि की है, उन्होंने आदिवासी भाषाओं के संरक्षण को प्रभावी ढंग से लागू नहीं किया है। टी.एम.ए. पै मामले ने शिक्षा में अल्पसंख्यक अधिकारों को मजबूत किया, लेकिन आदिवासी भाषाओं पर केंद्रित स्कूलों की उपेक्षा जारी है। सरकारी पहल का उद्देश्य बहुभाषी शिक्षा को बढ़ावा देना है, लेकिन आदिवासी भाषाओं के लिए मजबूत कार्यान्वयन का अभाव है। 'भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास संघ' और आदिवासी सांस्कृतिक संवर्धन जैसे कार्यक्रम आदिवासी संस्कृति की रक्षा के लिए मौजूद हैं, लेकिन वे अक्सर असंगत होते हैं और शिक्षा को प्रभावी ढंग से शामिल करने में विफल होते हैं।

'भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास संघ' आदिवासी शिल्प का समर्थन करता है, लेकिन इसमें भाषा संरक्षण के लिए जनादेश का अभाव है, जो व्यापक विकास में बाधा डालता है। जबकि ऑल इंडिया रेडियो (एआईआर) गोंडी प्रसारण जैसी पहल मौजूद हैं, उनकी पहुंच सीमित है। बस्तर में गोंडी रेडियो कार्यक्रम भाषा के उपयोग को प्रोत्साहित करते हैं, लेकिन शैक्षिक नीतियां इन प्रयासों का समर्थन नहीं करती हैं। आठवीं अनुसूची में गोंडी और अन्य महत्त्वपूर्ण आदिवासी भाषाओं को मान्यता देना नीति-संचालित समर्थन को बढ़ावा देगा। शैक्षिक निर्णयों में स्थानीय शासन को बढ़ाने से गोंडी-माध्यम विद्यालयों जैसी पहलों में नौकरशाही के हस्तक्षेप को रोकने में मदद मिल सकती है। आदिवासी भाषा शिक्षा के लिए समर्पित संसाधन, शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण और डिजिटल उपकरण प्रदान करने से सीखने की कमियों को दूर करने में मदद मिलेगी। हालाँकि संवैधानिक सुरक्षा और सरकारी कार्यक्रम आदिवासी समुदायों की भाषाई और सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा के लिए एक कानूनी आधार बनाते हैं, लेकिन कार्यान्वयन में चुनौतियां, अपर्याप्त संसाधन और नीतिगत उपेक्षा अक्सर उनके प्रभाव को कमजोर कर देती हैं। गोंडी-माध्यम विद्यालयों का बंद होना मजबूत संस्थागत समर्थन, समुदाय-नेतृत्व वाली पहल और बेहतर शैक्षिक बुनियादी ढांचे की तत्काल आवश्यकता को उजागर करता है। युवा पीढ़ी अक्सर बेहतर नौकरी की संभावनाओं के लिए प्रमुख भाषाओं की ओर आकर्षित होती है और कई आदिवासी भाषाएँ स्कूली पाठ्यक्रमों से अपरिचित या अनुपस्थित रहती हैं।

सांस्कृतिक विरासत भूमि और प्राकृतिक पर्यावरण से जटिल रूप से जुड़ी हुई है। वनों की कटाई और विस्थापन के खतरे दोनों को खतरे में डालते हैं। कई आदिवासी समुदाय डिजिटल प्लेटफॉर्म तक पहुंचने के लिए संघर्ष करते हैं, जिससे उनकी विरासत को ऑनलाइन प्रदर्शित करना चुनौतीपूर्ण हो जाता है। स्कूलों के लिए आदिवासी भाषाओं को अपने पाठ्यक्रम में शामिल करना आवश्यक है। मोबाइल ऐप, यूट्यूब ट्यूटोरियल और पॉडकास्ट का उपयोग करके सीखने को आकर्षक और सुलभ बनाया जा सकता है। बुजुर्गों को मौखिक परंपराओं और कहानियों को साझा करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। स्थानीय और राष्ट्रीय त्योहारों और समारोहों को सक्रिय रूप से बढ़ावा दिया जाना चाहिए। पारंपरिक ज्ञान को साझा करना, औषधीय पौधों, खेती के तरीकों और कला रूपों का दस्तावेजीकरण करना स्वदेशी ज्ञान को संरक्षित करने में मदद कर सकता है। सरकारों को पवित्र स्थलों और स्वदेशी लोगों के बौद्धिक संपदा अधिकारों की रक्षा करने की आवश्यकता है। आदिवासी भाषाओं में रेडियो स्टेशन, समाचार पत्र और सोशल मीडिया का उपयोग जागरूकता बढ़ा सकता है। हस्तशिल्प और पारंपरिक कला का विपणन ई-कॉमर्स और पर्यटन के माध्यम से किया जा सकता है। संरक्षण प्रयासों को निधि देने के लिए गैर सरकारी संगठनों, विश्वविद्यालयों और सरकारों के बीच सहयोग महत्त्वपूर्ण है। गोंडी-माध्यम विद्यालयों के बंद होने से न केवल शैक्षिक चुनौती है, बल्कि गोंड समुदाय के सांस्कृतिक अस्तित्व के लिए भी एक बड़ा खतरा है। शीघ्र कार्यवाही के बिना, भावी पीढ़ियों को अपनी भाषाई विरासत खोने का खतरा होगा, जिससे अपरिवर्तनीय सांस्कृतिक पतन हो सकता है।

(लेखिका के अपने विचार हैं)

बिहार में अपरिहार्य हैं नीतीश कुमार

डा हरिकृष्ण बड़ोदिया
वरिष्ठ लेखक एवं स्तंभकार

वैसे इस बात में कोई संशय था ही नहीं कि बिहार के विपक्षी महा गठबंधन का नेता तेजस्वी यादव के अलावा कोई और हो सकता था। तेजस्वी पिछले पांच सालों में जिस मुखरता से राजद खेमे की बैटिंग संभाल रहे थे, उससे महागठबंधन को लाभ ही हुआ है। चूंकि तेजस्वी यादव राज्य के उपमुख्यमंत्री रहे हैं, इससे उनका कद महागठबंधन के अन्य नेताओं की तुलना में बड़ा ही है। निश्चित ही ये स्थितियां महा गठबंधन के पक्ष में जाती हैं। लेकिन बिहार की राजनीति शेष भारत के अन्य राज्यों से बिल्कुल अलग है। पिछले कई सालों से यहां की राजनीति वर्तमान मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के इर्द-गिर्द ही घूमती रही है। यह एक स्थापित तथ्य है कि बिहार की राजनीति में नीतीश कुमार अपरिहार्य हैं। नीतीश एकमात्र ऐसे नेता हैं जिन्होंने कई बार पाला बदला लेकिन उन्हें जनता ने कभी नकारा नहीं। वे जिस भी धड़े में गए उस धड़े को हमेशा जनता ने समर्थन किया। इसका प्रमुख कारण जहां एक ओर लालू यादव और उनके परिवार की छवि भ्रष्टाचार से दागदार है तो वहीं नीतीश की आज तक न केवल एक बेदाग ईमानदार राजनेता की छवि है बल्कि उनके ऊपर आज तक भ्रष्टाचार का एक भी छींटा नहीं पड़ा। यही नहीं उन्होंने लालू यादव की उस राजनीति का भी समूल सफाया किया जिसमें हत्या, फिरौती, भाई भतीजावाद, दबंगई और स्वेच्छाचारी नेतागिरी का बोलबाला था, जिसे आज भी जंगल राज की संज्ञा दी जाती है। लालू के शासनकाल में बिहार में अपराधियों के बुलंद हौसलों ने आम जनता को त्रस्त करके रखा था। उच्च जाति के लोगों का दलितों पर अत्याचार एक आम बात थी। ऐसे में नीतीश ने इन पर नकेल कसने का काम किया। यही कारण है कि नीतीश जब भी बिहार के लोगों के बीच जाते हैं उन्हें जनता का समर्थन मिलता है।

इस साल के अंत में होने वाले बिहार विधानसभा के चुनाव सभी दलों को बहुत महत्वपूर्ण हैं। जहां एक ओर राजद और कांग्रेस का महा गठबंधन अपने 2020 के उस प्रदर्शन से उत्साहित है जिसमें उसने 243 में 110 सीटें पाईं थीं वहीं वह नीतीश कुमार के विगत एक दो सालों में स्वास्थ्य को आधार बनाकर जनता को यह एहसास कराने की कोशिश कर रहा है कि वर्तमान सरकार अब बिहार के लिए मुफीद नहीं है। तेजस्वी यादव ने अभी-अभी यह कहकर कि नीतिश सरकार और प्रशासन पूरी तरह से नकारा हो गया है प्रचार की रणनीति तय कर दी है। उन्होंने नीतीश पर व्यक्तिगत हमला कर शासन व्यवस्था और नीतीश के स्वास्थ्य पर एक ही वाक्य में तीन बिंदुओं पर जनता का ध्यान आकर्षित करने की कोशिश की है। उन्होंने कहा यह सरकार खटारा हो चुकी है, सारा सिस्टम नकारा हो चुका है और मुख्यमंत्री नीतीश कुमार थके हारे हैं। स्पष्ट है कि उनका हमला सीधा-सीधा नीतीश कुमार की सरकार, प्रशासन और व्यक्तिगत स्वास्थ्य पर रहा है। वैसे महागठबंधन यह अच्छी तरह से जानता है कि नीतीश बिहार की राजनीति में एक अहम स्थान रखते हैं। उनकी उपस्थिति मतदाताओं को सकारात्मक संदेश देती है। अगर नीतीश कुमार फिर पाला बदलने की इच्छा जाहिर करें तो राजद उन्हे बाहें फैला कर गले लगाने में चूकेगा नहीं। जो इस बात को स्पष्ट करता है कि नीतीश किसी भी गठजोड़ के लिए हमेशा लाभदायक ही रहे हैं। यही स्थिति भाजपा की है। भाजपा जानती है कि हालांकि पिछले 2020 में उसे जनता ने भरपूर समर्थन किया और 243 सदस्यों की विधानसभा में 75 सीटें जीतकर उनका चुनावी प्रदर्शन शानदार रहा लेकिन वह इस बात को नकार नहीं सकती कि उसका यह प्रदर्शन नीतीश कुमार के साथ के बिना संभव नहीं था। यही कारण था कि जदयू की विधानसभा में मात्र 43 सीटें होने के बावजूद तथा एनडीए की 125 सीटों में 75 भाजपा की होने के बाद भी उन्होंने नीतीश कुमार को ही अपना मुख्यमंत्री बनाया। हालांकि 2022 में नीतीश ने पाला बदलकर महागठबंधन के साथ सरकार बनाई लेकिन लालू परिवार के दबाव और

लालू पुत्रों के स्वेच्छाचारी व्यवहारों से परेशान हो नीतीश ने 2023 में पुनः राजद का साथ छोड़कर एनडीए का साथ लिया। एक सच्चाई यह भी है कि यह नीतीश ही थे जिन्होंने इंडी गठबंधन की नींव डाली लेकिन विरोधी महत्वाकांक्षी नेताओं जिनमें लालू भी शामिल थे ने नीतीश को इंडी गठबंधन का ना तो संयोजक बनने दिया और ना ही कोई विशेष सम्मान दिया जिससे नाराज होकर नीतीश ने इंडी गठबंधन का साथ छोड़ एनडीए से जुड़ना उचित समझा। हालांकि दोनों बार पाला बदलते समय नीतीश ने यही दोहराया था कि अब मैं कहीं भी नहीं जाऊंगा।

बीजेपी बिहार में पिछले चुनाव की तरह ही आज भी एक सशक्त खिलाड़ी है और हरियाणा महाराष्ट्र और दिल्ली विधानसभा में एक तरफा जीत के झंडे गाड़ने के बाद उसकी लोकप्रियता में इजाफा हुआ है तो भी वह नीतीश के बिना अपनी सफलता को अक्षुण्ण नहीं मानती। यही कारण है कि विपक्ष द्वारा लगातार नीतीश के व्यक्तिगत स्वास्थ्य पर हमले के बावजूद भी उपमुख्यमंत्री सम्राट चौधरी ने स्पष्ट कर दिया कि एनडीए बिहार में नीतीश के चेहरे पर ही चुनाव लड़ेगी और अगले सीएम नीतीश कुमार ही होंगे जो स्पष्ट करता है कि नीतीश बिहार की राजनीति के लिए कितने महत्वपूर्ण हैं। यूं तो बिहार में राजद, जदयू और भाजपा तीन ही प्रमुख दल हैं किंतु एक चौथा दल भी इस बार अपनी उपस्थिति दर्ज कराने के लिए पुरजोर मेहनत कर रहा है। वह है प्रशांत किशोर की जन सुराज पार्टी। प्रशांत किशोर ने लगातार पद यात्रा करके जनता का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। प्रशांत किशोर राजद, जदयू और भाजपा पर हमलावर रहे हैं। देखना होगा कि वह बिहार के मतदाताओं को कितना प्रभावित कर पाते हैं। हालांकि उन्होंने बिहार विधानसभा के उपचुनाव में अपने चार प्रत्याशी उतारे जिनमें से एक भी जीत नहीं पाया लेकिन इसके बावजूद भी देखना होगा कि अपनी नई भूमिका से वे बिहार के मतदाताओं को कितना प्रभावित कर पाए हैं। वे स्वयं एक चुनावी रणनीतिकार हैं और 2014 में मोदी के साथ तथा 2015 में नीतीश के साथ उनकी रणनीति ने काफी प्रभावित किया था। यही नहीं वे एक समय नीतीश की पार्टी जदयू के उपाध्यक्ष भी रहे हैं, अब अपनी पार्टी को किस तरह प्रसांगिक बना पाएंगे देखने वाली बात होगी। उनका हमला भी फिलहाल तो नीतीश पर ही ज्यादा फोकस दिखाई देता है। उनके अनुसार कुछ भी हो जाए नीतीश कुमार अगले मुख्यमंत्री नहीं बन पाएंगे। निश्चित ही यह एक प्रकार का मनोवैज्ञानिक दबाव बनाने का प्रयत्न है। यही नहीं वे यह भी कहते हैं कि जल्दी ही नीतीश पाला बदलने वाले हैं। जो भी हो चुनावी बयानों में ऐसी सब बातें रणनीति का हिस्सा हुआ करती हैं। वैसे यह भी एक सच्चाई है कि नीतीश कुमार के बारे में तब तक कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती जब तक कि वे कोई स्पष्ट बयान नहीं दे देते। हालांकि उनके बयानों की यह विशेषता रहती है कि कोई भी उनके अगले कदम का अंदाजा नहीं लगा सकता। प्रशांत किशोर की पार्टी कोई बड़ा उलट फेर कर पाएगी ऐसा लगता तो नहीं किंतु उनकी बिहार की यात्रा और बिहार के छात्र आंदोलनों की आवाज बनने ने उन्हें एक चुनावी प्रतिद्वंद्वी के रूप में स्थापित जरूर किया है। यदि वह थोड़ा भी अच्छा परिणाम दे पाए तो स्थितियां बदल सकती हैं। निश्चित ही प्रशांत किशोर सरकार बनाने में किंग मेकर की भूमिका की आस लगाकर मैदान में उतरेंगे लेकिन आज की स्थितियों में बिहार एनडीए के सभी घटक चाहे वह नीतीश की जदयू हो या चिराग की लोजपा हो या उपेंद्र कुशवाह की राष्ट्रीय लोक मोर्चा हो या जीतन राम मांझी की हम पार्टी हो या भाजपा सभी एकजुट होकर मजबूती से विपक्ष के महागठबंधन को चुनौती देने के लिए तैयार हैं। निश्चित ही बिहार के इस बार के चुनाव बहुत कशमकश के होंगे क्योंकि राजद के तेजस्वी यादव सत्ता प्राप्त करने के लिए हर संभव कोशिश करने को आतुर हैं।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

धरती पर सुनीता की धमक

डॉ सत्यवान सौरभ

नासा की अनुभवी अंतरिक्ष यात्री सुनीता विलियम्स और उनके साथी बुच विल्मोर, जो पिछले नौ महीने से अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन पर थे, आज सफलतापूर्वक धरती पर लौट आए हैं। स्पेसएक्स के ड्रैगन कैप्सूल की मदद से उन्होंने मेक्सिको की खाड़ी में सुरक्षित लैंडिंग की। सुनीता विलियम्स और बुच विल्मोर जून 2024 में बोइंग के स्टारलाइनर के साथ परीक्षण उड़ान के लिए अंतरिक्ष में गए थे। हालांकि, स्टारलाइनर में तकनीकी खामी के कारण उनकी वापसी में देरी हुई, जिससे वे नौ महीने तक क्रू पर रहे। उनकी वापसी के लिए स्पेसएक्स का क्रू-10 मिशन लॉन्च किया गया था, जिसने सफलतापूर्वक उन्हें धरती पर वापस लाया। वापसी के बाद, दोनों अंतरिक्ष यात्रियों को स्ट्रेचर पर ले जाया गया, जो लंबे समय तक भारहीनता में रहने के बाद सामान्य प्रक्रिया है। यह मिशन न केवल तकनीकी दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहा, बल्कि इससे वैज्ञानिकों को अंतरिक्ष में लंबे समय तक रहने के प्रभावों को समझने में भी मदद मिलेगी। इससे नासा और अन्य अंतरिक्ष एजेंसियों को भविष्य के गहरे अंतरिक्ष अभियानों, जैसे कि मंगल पर मानव मिशन की योजना बनाने में सहायता मिलेगी। सुनीता विलियम्स की यह वापसी अंतरिक्ष अन्वेषण के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। यह मिशन भविष्य के अंतरिक्ष अभियानों के लिए मूल्यवान डेटा प्रदान करेगा और अंतरिक्ष यान तकनीक के सुधार में सहायक सिद्ध होगा।

सुनीता विलियम्स और उनके जैसे अनुभवी अंतरिक्ष यात्री भविष्य के चंद्र और मंगल अभियानों में अहम भूमिका निभा सकते हैं। नासा और अन्य स्पेस एजेंसियाँ अब दीर्घकालिक अंतरिक्ष मिशनों की तैयारी कर रही हैं, जिनमें अंतरिक्ष में रहने के नए तरीके, कृत्रिम गुरुत्वाकर्षण की संभावनाएं और अंतरिक्ष यात्रियों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों को कम करने की रणनीतियाँ शामिल हैं। इसके अलावा, स्टारलाइनर जैसी तकनीकों में सुधार कर, अंतरिक्ष अन्वेषण को अधिक सुरक्षित और कुशल बनाया जाएगा। अंतरिक्ष में मानव उपस्थिति को और विस्तारित करने के लिए वैज्ञानिक शोध जारी रहेंगे, जिससे भविष्य में मंगल और उससे आगे की यात्राएँ संभव हो सकेंगी। सुनीता विलियम्स भारतीय मूल की अमेरिकी अंतरिक्ष यात्री हैं, जिनका भारत से गहरा जुड़ाव रहा है। उनके पिता भारतीय मूल के हैं और उन्होंने कई बार भारत के प्रति अपने प्रेम को व्यक्त किया है। भारत में अंतरिक्ष विज्ञान और अनुसंधान की बढ़ती उपलब्धियों के बीच, सुनीता विलियम्स एक प्रेरणास्रोत बनी हुई हैं। इसरो भी अब मानव अंतरिक्ष उड़ान कार्यक्रम, गगनयान, की दिशा में तेजी से बढ़ रहा है। इसरो ने हाल ही में गगनयान के लिए प्रमुख परीक्षण पूरे किए हैं और आने वाले वर्षों में भारत के पहले मानव अंतरिक्ष मिशन को लॉन्च करने की योजना बना रहा है।

सुनीता विलियम्स की उपलब्धियाँ न केवल भारतीय वैज्ञानिकों बल्कि देश के युवाओं के लिए भी प्रेरणा का स्रोत हैं। उनकी सफलता यह दिखाती है कि भारतीय मूल के लोग वैश्विक वैज्ञानिक समुदाय में महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। भविष्य में, इसरो और नासा के बीच सहयोग बढ़ सकता है, जिससे भारत के अंतरिक्ष कार्यक्रम को और मजबूती मिलेगी। सुनीता विलियम्स न केवल एक उत्कृष्ट अंतरिक्ष यात्री हैं, बल्कि एक प्रेरणादायक व्यक्तित्व भी हैं। उनका सफर यह दर्शाता है कि कड़ी मेहनत, दृढ़ संकल्प और विज्ञान के प्रति जुनून कैसे किसी को नई ऊंचाइयों तक पहुंचा सकता है। उन्होंने विशेष रूप से महिलाओं और युवा वैज्ञानिकों को प्रेरित किया है कि वे अंतरिक्ष अनुसंधान और विज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ें। उन्होंने कई मौकों पर भारतीय छात्रों और युवाओं से संवाद किया है और उन्हें वैज्ञानिक क्षेत्रों में करियर बनाने के लिए प्रोत्साहित किया है। उनके अनुभव और उपलब्धियां न केवल अंतरिक्ष क्षेत्र बल्कि विज्ञान और तकनीक में रुचि रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक प्रेरणा हैं। उनकी कहानी यह संदेश देती है कि सीमाएं केवल मानसिकता में होती हैं और यदि कोई लक्ष्य निर्धारित किया जाए, तो उसे प्राप्त किया जा सकता है।

सुनीता विलियम्स और उनके जैसे अनुभवी अंतरिक्ष यात्री भविष्य के चंद्र और मंगल अभियानों में अहम भूमिका निभा सकते हैं। नासा और अन्य स्पेस एजेंसियां अब दीर्घकालिक अंतरिक्ष मिशनों की तैयारी कर रही हैं, जिनमें अंतरिक्ष में रहने के नए तरीके, कृत्रिम गुरुत्वाकर्षण की संभावनाएँ और अंतरिक्ष यात्रियों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों को कम करने की रणनीतियां शामिल हैं। इसके अलावा, स्टारलाइनर जैसी तकनीकों में सुधार कर, अंतरिक्ष अन्वेषण को अधिक सुरक्षित और कुशल बनाया जाएगा। अंतरिक्ष में मानव उपस्थिति को और विस्तारित करने के लिए वैज्ञानिक शोध जारी रहेंगे, जिससे भविष्य में मंगल और उससे आगे की यात्राएं संभव हो सकेंगी। सुनीता विलियम्स की यह वापसी अंतरिक्ष अन्वेषण के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। यह मिशन भविष्य के अंतरिक्ष अभियानों के लिए मूल्यवान डेटा प्रदान करेगा और अंतरिक्ष यान तकनीक के सुधार में सहायक सिद्ध होगा।

इंसानों की दुनिया में सुनीता ने फिर से रखा कदम?

रमेश ठाकुर
पत्रकार एवं स्तंभकार

इंसानों की दुनिया में तुम्हारा फिर से स्वागत है सुनीता। तुम्हारी इस शानदार उपलब्धि ने नारी शक्ति की गाथा को नए सिरे से लिख दिया है। धरा पर सकुशल लौटी सुनीता के लिए बस यही कहा जाएगा,.... 'नारी तू नारायणी'। बीते 9 महीनों से अंतरिक्ष में फंसी सुनीता विलियम्स की आकाश से धरती पर सफल लैंडिंग की अद्भुत, अकल्पनीय कहानी ने जो कारनामा कर दिखाया है, उसे दुनिया युगांतर तक याद रखेगी। जब तक धरती रहेगी, उनके किस्से सुनाए जाते रहेंगे। सुनीता की यात्रा महज 10 दिनों की थी, लेकिन तकनीकी खामियों ने उन्हें आकाश में लंबे समय तक रोके रखा। बुधवार भोर में जब ड्रैगन अंतरिक्ष यान सफलतापूर्वक पृथ्वी पर उतरा, तो समूचे संसार ने अंतरिक्ष यात्रियों का दिल खोलकर स्वागत किया। पूरा संसार टीवी की स्क्रीन पर नजरें गड़ाए हुए था। उनकी सकुशल वापसी की दुआएं कर रहे थे। आखिरकार लोगों की दुआएं और नासा की कोशिशें सफल हुईं। सुनीता विलियम्स और क्रू सदस्य बुच वेल्लोर, निक हेग और रूसी यात्री अलेक्सांद्र गोरबुनोव लंबा समय बिताकर लौट आए। धरा पर पांव रखने के बाद सुनीता ने जो बताया उसे सुनकर लोगों के रोंगटे खड़े हो गए, उन्होंने बताया कि एक वक्त तो उन्होंने जीने की उम्मीदें छोड़ दी थी, उन्हें लगा अब धरती पर लौट पाना संभव नहीं? जीने की तकरीबन उम्मीदें उन्होंने त्याग दी थी। लेकिन हौसले को टूटने नहीं दिया?

नासा के लगभग 11 प्रयास असफल हुए थे। विटामिन-डी की कमी सुनीता के शरीर में लगातार कम हो रही थी। इस दरम्यान उन्होंने निश्चय किया, बेशक वो जमीन पर न लौट पाए? पर, अंतरिक्ष में उनकी दुर्लभ रिसर्च जारी रहेंगी। उनकी हिम्मत को आज मानव जीवन का प्रत्येक शख्स दाद दे रहा है। शेर के मुंह से कैसे निकलते हैं, जिसका सजीव उदाहरण

सुनीता ने पेश किया है। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड टर्म का चुनावी वादा भी पूरा हुआ। चुनाव में उन्होंने सुनीता को वापस लाने का वादा देशवासियों से किया था। सुनीता को अंतरिक्ष से लाने वाला ड्रैगन कैप्सूल का निर्माण हाल में ही राष्ट्रपति की विशेष अनुमति से युद्वस्तर पर करवाया गया। अंतरिक्ष यात्री को लेकर जब ड्रैगन कैप्सूल समुद्र में गिरा, तो उसका नजारा देखने लायक था। डॉल्फिन मछलियां भी उछल-उछल कर उनका स्वागत कर रही थीं। एस ऐतिहासिक पल का साक्षी बनकर पूरा जगत भी गदगद हुआ।

सुनीता के हौसले ने नया इतिहास लिखा है। नारी शक्ति का बेजोड़ उदाहरण पेश किया है। 5 जून 2024 को सुनीता विलियम्स और बुच विल्मोर दोनों ने नासा के मिशन के तहत बोइंग के अंतरिक्ष यान में बैठकर इंटरनेशनल स्पेस स्टेशन के लिए उड़ान भरी थी। मिशन की अवधि मात्र 10 दिनों में पूरा करने की थी। लेकिन अंतरिक्ष यान में खराबी आने से मिशन महीनों आकाश में फंसा रहा। इसी कारण 10 दिनी मिशन को 9 महीनों में पूरा किया गया। शायद नियति को यही मंजूर था, इसलिए उसने 19 मार्च 2025 की तारीख को सुनीता और बुच, निक हेग और अलेक्जेंडर गोबुनीव का आना धरती पर मुकर्रर कर रखा था। 19 मार्च का तड़के सुबह 3.27 बजे का समय भी इतिहास के पन्नों में दर्ज हो गया। सुनीता समेत अंतरिक्ष यात्री की सकुशल वापसी ने पुरे विश्व में खुशी का माहौल पैदा किया है।

सुनीता से परिचित तो अब सभी का हो चुका है, जानते भी हैं कि वह भारतीय मूल की हैं। उनका परिवार भारत के गुजरात राज्य से वास्ता रखता है। पिता दीपक पांड्या गुजरात के झूलासण के रहते थे। जो वर्ष-1957 में अमेरिका जाकर बस गए थे। झूलासण के लोग भी कल से आपस में लड्डू बांटकर सुनीता के आगमन में खुशियां मना रहे हैं। ढोल-नगाड़ों से स्वागत कर रहे हैं। सुनीता अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारतीय मूल की दूसरी अमेरिकी अंतरिक्ष यात्री हैं। उनसे पहले हरियाणा की कल्पना चावला भी ये उपलब्धि हासिल कर चुकी थीं। पर, 2003 में कोलंबिया स्पेस शटल के दुर्घटना होने से उनकी दुखद मृत्यु हो गई थी। सुनीता का जन्म 1965 में हुआ था। उनकी मां का नाम उसुर्लाइन बोनी पांड्या है, जो स्लोवेनिया से हैं। सुनीता ने पहली बार वर्ष-2006 में डिस्कवरी स्पेस शटल के जरिए अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन पर गई थीं।

बहरहाल, अमेरिकी हुकूमत के इस पूरे मिशन और नासा स्पेसएक्स टीम की कड़ी मेहनत और समर्पण की लोग सराहना कर रहे हैं। ड्रैगन कैप्सूल जब आकाश से नीचे गिर रहा था, और धरती पर उतरने की दूरी जब 18 हजार फिट रह गई थी, तब उसे पैराशूट के जरिए समंदर में लैंड करवाया गया। उस समय सभी दिल थामे बैठे थे। मन में डर का भाव भी उमड़ रहा था। क्योंकि 2003 में हम कल्पना चावला को खो चुके थे। उनका ख्याल भी मन को विचलित कर रहा था। लैंडिंग के वक्त न सिर्फ नासा के कंट्रोल रूम के साइंटिस्टों की नजरें स्क्रीन पर टिकी थी, बल्कि संपूर्ण जगत टीवी से चिपका हुआ था। निश्चित रूप से दृश्य धड़कनें बढ़ाने वाला था। समंदर में उतरने के करीब 10-12 मिनट तक तो चारों ओर सन्नाटा पसरा रहा, थोड़ी देर बाद वैज्ञानिकों ने सिक्यॉरिटी चेक किया। नासा के मुताबिक कैप्सूल को तुरंत और सीधे नहीं खोला जाता। भीतरी और बाहरी तापमान को एक लेवल पर किया जाता है। क्योंकि कैप्सूल जब धरती के वातावरण में घुसता है, तो जमीन की गर्मी से एकदम लाल होता है। इसलिए समंदर में उतरने के बाद भी उसके तापमान के सामान्य होने का इंतजार किया जाता है। नासा ने इस प्रक्रिया में किसी भी तरीका का कोई जोखिम नहीं उठाया। उन्हें आभास हो चुका था, कि उनका मिशन सफल होने को है।

सोशल मीडिया से प्यार

त्याग, समर्पण और अटूट विश्वास ही दाम्पत्य का मूल आधार है और यही मानव जीवन को खुशहाल भी बनाता है, लेकिन तकनीकी दौर में सोशल मीडिया से बढ़ते प्यार के बीच पति-पत्नी के बीच तकरार आम हो चली है और उनके बीच का प्यार इसी में कहीं खोता जा रहा है, जो दाम्पत्य जीवन को बिगाड़ रहा है। नतीजन, पति-पत्नी के बीच तलाक के मामले बढने.लगे हैं। अगर समय रहते नहीं चेते तो हालत बद से बदतर होंगे और भावी पीढ़ी को इसके दुष्परिणाम झेलने ही पड़ेंगे।

राजेश खण्डेवाल
वरिष्ठ स्तंभकार

तकनीकी दौर में हर हाथ में पहुंचे मोबाइल ने व्यक्ति का नजरिया ही बदल दिया है। लोगों के बीच सम्पर्क व संवाद घटा है तो परिवार व रिश्तेदारी में भी आना-जाना कम हुआ है। अपनों के बीच व्यक्ति को अपनों की सुध नहीं है, लेकिन वह सोशल मीडिया पर सक्रिय रहकर अनजानों के बीच लाइक व कमेंट के गेम में खोया हुआ है। परिणामस्वरूप लोगों के मिलने-जुलने, सोचने-समझने और एक-दूसरे से बातचीत के तौर-तरीके बदल गए हैं। इससे रोमांटिक और वैवाहिक रिश्तों में खटास के अलावा परिवार टूट रहे हैं। बीते 3 साल में सोशल मीडिया के प्रभाव से वैवाहिक समस्याएं, बेवफाई, संघर्ष, ईर्ष्या, तनाव और तलाक जैसी समस्याएं तेजी से बढ़ी हैं। एडजुआ लीगल्स गूगल एनॉलिटिक 2025 की रिपोर्ट के अनुसार दिल्ली, बेंगलुरु, मुंबई, लखनऊ, हैदराबाद और कोलकाता जैसे शहरों में हाल के वर्षों में तलाक के आवेदनों में तीन गुना वृद्धि देखी गई है। कंप्यूटर्स इन ह्यूमन बिहेवियर में प्रकाशित एक हालिया अध्ययन में भी राज्य-दर-राज्य तलाक दरों की तुलना प्रति व्यक्ति फेसबुक खातों से की गई। अध्ययन में सोशल मीडिया के उपयोग को विवाह की गुणवत्ता में कमी का बड़ा कारण माना गया है। फेसबुक पर 20 फीसदी लोग बढ़े तो महानगरों में तलाक दर 2.18 से 4.32 व्यक्ति बढ़ गई है। अध्ययन में यह भी पाया गया है कि सोशल मीडिया का उपयोग नहीं करने वाले हर दिन सोशल मीडिया का उपयोग करने वालों की तुलना में अपने वैवाहिक जीवन में 11 फीसदी अधिक खुश हैं।

यू.के. में एक अध्ययन में पाया गया कि तलाक लेने वाले 3 में से 1 जोड़े ने स्वीकार किया कि वो फेसबुक, इंस्टाग्राम और स्नेपचैट को अपने पति या पत्नी से ज्यादा समय देता है। मिसौरी विश्वविद्यालय के एक अध्ययन में फेसबुक से शुरू हुए संघर्ष को बेवफाई, ब्रेकअप और तलाक का कारण माना गया। दुनिया में सबसे ज्यादा तलाक दर मालदीव में 5.52 प्रति हजार जबकि सबसे कम श्रीलंका में 0.15 प्रति हजार है। भारत में यह प्रति हजार एक व्यक्ति से भी कम है। अध्ययन में कहा गया है कि रोमांटिक साथी के सोशल मीडिया इंटरैक्शन के बारे में संदेह अक्सर सही होता है। दस में से एक वयस्क अपने पार्टनर से दूसरे के मैसेज और पोस्ट छिपाने की बात स्वीकार की है। लिव इन में रहने वाले 8 प्रतिशत वयस्क एक या अधिक गुप्त सोशल मीडिया और बैंक अकाउंट रखने की बात स्वीकार करते हैं। वहीं, तीन में से एक तलाक अब ऑनलाइन संबंधों के कारण हो रहा है।

लोग अक्सर अपने साथी के फेसबुक अकाउंट पर कुछ खोजने के बाद अपने रिश्ते को लेकर असहज महसूस करते हैं। इससे अक्सर रिश्ते में निगरानी, ईर्ष्या और संघर्ष बढ़ जाता है। शोध मे पाया गया कि कोई व्यक्ति अपने जितना ही अपने साथी की फेसबुक गतिविधि की जांच करता है, वह उतना ही ईर्ष्या और अविश्वास से भरता जाता है।

व्यस्त जीवनशैली तनाव पैदा करती है, क्योंकि यहां रिश्तों के लिए बहुत कम समय बचता है। लंबे समय तक काम करना, नौकरी का दबाव, वित्तीय चुनौतियां और पारिवारिक जिम्मेदारियों में कमी अक्सर अलगाव का कारण बनती हैं। दिल्ली, मुंबई, चेन्नई और बेंगलूरु जैसे मेट्रो शहरों में तलाक के सर्वाधिक मामले दर्ज किए जाते हैं, जो वैवाहिक जीवन पर हावी शहरीकरण को उजागर करते हैं।

एडजुआ लीगल्स गूगल एनॉलिटिक 2025 के मुताबिक 25 से 34 वर्ष के बीच तलाक के मामले सर्वाधिक 35.1 फीसदी हैं तो 18 से 24 के बीच 27.6 फीसदी तलाक होते हैं। यह आंकड़ा 35 से 44 वर्ष के बीच 16.2 तथा 45 से 54 वर्ष के बीच 10 फीसदी है। 55 से 64 वर्ष के बीच 7 तो 65 वर्ष से अधिक आयु के 5 फीसदी तलाक होते हैं।

एडजुआ लीगल्स गूगल एनॉलिटिक 2025 के मुताबिक देश में तलाक के संभावित कारणों में कमिटमेंट में कमी के कारण 75 फीसदी, बेवफाई के कारण 59.6 फीसदी, संघर्ष और बहस के कारण 57.7 फीसदी, कम उम्र में शादी होने के कारण 45.1 फीसदी, वित्तीय समस्याओं के कारण 36.7 फीसदी, मादक द्रव्यों का सेवन करने के कारण 34.6 फीसदी तथा घरेलू हिंसा के कारण 23.5 फीसदी तलाक होते हैं।

आंकड़ों के मुताबिक सितम्बर, 2024 तक देश में सर्वाधिक तलाक दर वाले राज्यों में महाराष्ट्र है, जहां प्रति हजार व्यक्ति तलाक के 18.7 मामले हैं तो कर्नाटक में 11.7, पश्चिम बंगाल 8.2, दिल्ली में 7.7, तमिलनाडु में 7.1, तेलंगाना में 6.7, केरल में 6.3 तथा राजस्थान में 2.5 हैं।

मुस्लिम, सीख और इसाई को सौग़ात ए मोदी किट

बीजेपी देख रही है मुंगेरी लाल के हसीन सपने!

मुस्लिम तुष्टिकरण पर देश के खजाने से छह सौ चालीस करोड़ की लूट !

ए आर आजाद
वरिष्ठ पत्रकार प्रिंट व इलेक्ट्रोनिक मीडिया

इंट्रो- देश के खजाने से तक़रीबन छह सौ चालीस करोड़ ख़र्च करके ईद पर मुसलमानों को तोहफ़ा देने की एक परंपरा शुरू हुई है। यह किसी और ने नहीं उन्होंने की है, जिन्होंने कभी दावा किया था कि उन्हें मुस्लिम वोट की ज़रूरत ही नहीं है। यानी बीजेपी की पहली नज़र बिहार के मुस्लिम मतदाताओं पर है। फिर बंगाल, असम, केरल, तमिलनाडु और पुदुचेरी पर। बीजेपी ने ईद में तोहफ़ा देकर बदले में वोट का जक़ात लेने का उन्होंने एक नया सपना देखा है। इसी सपने को इतिहास ने 'मुंगेरी लाल के हसीन सपने' क़रार दिया है। पढ़िए ए आर आज़ाद की बेबाक तौर पर की गई प्रधानंत्री मोदी के मुस्लिम तुष्टिकरण की पड़ताल। और बीजेपी की मुस्लिम तुष्टिकरण पर खुला प्रहार।

शिद्दत की गरमी में नदी किनारे बैठकर मछली मारने वाले लंबे वक़्त से किसी मछली के फंसने की बाट जोह रहे हों, और फिर भी एक मछली न फंस पाए, तो ज़ाहिर है उसके अंदर बेचैनी तो होगी ही। और इसी बेचैनी को भांपकर कोई मगरमच्छ उससे कह दे कि आओ मेरी पीठ पर चढ़ जाओ, मैं तुम्हें बड़ी-बड़ी मछलियां पकड़वा दूंगा। तो ज़ाहिर सी बात है कि मछली मारने वाले की बंसी में मछली फंसे या न फंसे, लेकिन मगरमच्छ के जाल में वह मछली मारने वाला ज़रूर फंस जाएगा।

यही कहानी कुछ घूमाफिराकर सौग़ात ए मोदी की है। मोदी को देश का ज़्यादातर मुसलमान 'मगरमच्छ' ही समझता है। इसलिए वह डरा सहमा रहता है। उसे मालूम है कि नदी में रहकर मगरमच्छ से बैर नहीं किया जाता है। अब सवाल उठता है कि सरकारी खज़ाने को मुसलमानों पर ख़र्च करने की योजना मोदी ने क्यों बनाई? यह सवाल इसलिए उठता है कि मोदी की ही तरह प्रधानमंत्री रहते हुए डॉ. मनमोहन सिंह ने जब कहा था कि देश के संसाधनों पर पहला हक़ मुसलमानों का है, तो तब के पीएम उम्मीदवार मोदी बिफर उठे थे। पूरे समाज में विरोध की लहर दौड़ा दी थी। इस ख़बर को आग की तरह फैला दी थी। एक आंधी ला दी थी। एक भूचाल ला दिया था। जबकि तत्कालनी प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के उस कथन से समाज के किसी हिस्से का कोई नुक़सान नहीं हुआ था। देश के खज़ाने से कुछ नहीं निकला था। देश पर कोई बोझ नहीं बढ़ा था। जीडीपी के मामले में भी आर्थिक नुक़सान का भी कोई अंदेशा नहीं था। किसी नुक़सान का दूर-दूर तक कोई गुमान भी नहीं था। लेकिन मौजूदा देश के कट्टर और एक धर्मविशेष के प्रधानमंत्री के तौर पर ख़ुद को स्थापित करने वाले और बीजेपी के स्वयंभू प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने तो अपने नाम पर सौग़ात ए मोदी योजना को लागू कर देश को की संपत्ति को दोनों हाथों से लुटा दिया है। उन्होंने देश के खज़ाने में से अनुमानित छह सौ चालीस करोड़ रूपए का चूना लगाया है। इसे दूरदृष्टि नहीं, ख़ुदगर्ज़ी समझा जाए। इसे सौदा समझा जाए। और इसे महज़ एक सौदागर का सौदा समझा जाए।

अगर ऐसा नहीं है, तो प्रधानमंत्री मोदी मुस्लिम तुष्टिकरण करना छोड़ दें। मुस्लिम तुष्टिकरण पर उनका कोई अधिकार नहीं है। बीजेपी ने मुस्लिम तुष्टिकरण के नाम पर एक षडयंत्र के तहत मुसलमानों को मिलने वाली योजनाओं से लगातार वंचित किया है। आज के प्रधानमंत्री और कल के गुजरात के मुख्यमंत्री और उससे पहले आरएसएस के जांबाज़ सिपाही नरेन्द्र मोदी ने सेक्युलर सरकारों को मुस्लिम तुष्टिकरण के नाम पर नाक में इतना दम कर दिया था कि तथाकथित धर्म निरपेक्ष सरकारें डर से मुसलमानों के लिए योजना बनानी ही बंद कर दी। योजना बनाई, तो उसे सिर्फ़ और सिर्फ़ काग़ज़ों तक ही सीमित कर दिया। उस योजना को क्रियान्वित ही नहीं होने दिया। और अल्पसंख्यक मामलों में बांटी गई राशि ख़र्च तक नहीं हो सकी। साल दर साल यानी वर्षों-वर्ष वे पैसे यूं के ही यूं पड़े रहे।

यह समझना होगा कि जो बीजेपी कहती रही, जो देश के 56 इंच के सीने वाले प्रधानमंत्री कहते रहे कि मुझे मुस्लिम वोटों की ज़रूरत नहीं है। आज उन्हें मुसलमानों की याद कैसे आ गई? कैसे उन्हें पता चला कि मुसलमान ईद भी मनाते हैं। इसी प्रधानमंत्री की पुलिस ने रोड पर नमाज़ पढ़ने वाले मुसलमानों को नमाज़ पढ़ते हुए लाठी और डंडों से बेहतहाशा पीटा था। अधमरा करके छोड़ा था। जिस प्रधानमंत्री मोदी के राज में देश के मुसलमान दोयम दर्जे के नागरिक हो गए हैं, जिन्हें किसी न किसी नाम पर, कभी भी, किसी भी समय तंग किया जा सकता है। याद कीजिए गाय के नाम पर कितने मुसलमानों के साथ दरिंदगी की गई? कितने मुसलमानों को मौत के घाट उतार दिया गया? और देश के दूसरे मौनी बाबा यानी प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी चुप। एकदम चुप। सन्नाटा भरा चुप।

अब सवाल उठता है कि क्या सही मायने में देश के अन्य धर्मावलंबी इस नफ़रत की खेती से बीजेपी और संघ से नाराज़ होते जा रहे हैं। उन्हें किसी विकल्प की तलाश है। और संघ ने देश के इन हिन्दुओं की मानसिकता को पढ़ लिया है। और अब संघ को लगता है कि बीजेपी मुसलमानों के मामले में अंतिम चोटी तक पहुंच चुकी है। इसलिए बीजेपी को फिर से कुछ क़दम पीछे हटना चाहिए। दरअसल एक कहावत है कि जिसे लंबी छलांग लगानी हो, वो कुछ क़दम पीछे हटकर छलांग लगाएं। संघ इसी सोच की हिमायती है। और इसी के नतीजे में संघ प्रमुख मोहन भागवत ने पिछले कुछ महीनों से मुसलमानों को लेकर अपने बयानों को लचीला बना लिया है। दरअसल संघ बीजेपी के लिए पटरी तैयार करती है। फिर बीजेपी उस पटरी पर बॉगी और इंजन की तरह दौड़ लगाती है। संघ की यह पटरी बीजेपी के लिए मुफ़ीद होगी कि नहीं, यह कहना मुश्किल है, क्योंकि संघ और बीजेपी ख़ुद दोनों एक पटरी पर नहीं है। संघ कुछ चाहती है, बीजेपी कुछ। दोनों के अंतर का फासला अब तो खाई में तब्दील होता चला जा रहा है। संघ के अंदर से आदर्शवाद और इंसाफ़ दोनों चला गया। संघ से संस्कार की उम्मीद रखना तो अब बेमानी होगी। देश के प्रमुख संघियों में से एक नरेन्द्र मोदी ने प्रधानमंत्री बनते ही संघ को भी अपने ही रंग में रंग दिया। बीजेपी का ऑफ़िस अगर पंच सितारा का बाप बना तो संघ का ऑफ़िस भी किसी पांच सितारे से कम नहीं रहा। सुविधाओं के जाल में संघ को मोदी ने ऐसा जकड़ दिया कि अब संघ को मौज की आदत लग गई है। और यही आदत बीजेपी के लिए वरदान साबित हुई। और संघ के लिए जी का जंजाल।

हृदय परिवर्तन हुआ है। अब बिहार में बीजेपी की सरकार आएगी, तो इसी तरह मुसलमानों पर तोहफ़े की बारिश होगी। अब तो प्रधानमंत्री का मन कर रहा है कि देश के मुसलमानों की आर्थिक हालत ठीक हो जाए। और इसकी शुरूआत बिहार में बीजेपी सरकार के आने के साथ ही हो। इसलिए आप लोग सबकुछ भूलकर बीजेपी को वोट दीजिए। और यह किट लीजिए। और संवेदनाओं में बहने वाला मुसलमान भी यह सौग़ात किट लेकर बीजेपी को वोट दे देगा। और बीजेपी 2025 में बिहार में अपने दम पर पूर्ण सरकार गठित कर लेगी। जैसे दिल्ली में अपने दम पर पूर्ण बहुमत की सरकार गठित कर ली है। यह बीजेपी का मंसूबा है। इसे आप इस तरह समझ सकते हैं। बिहार में एक जगह है। वह जगह मीर क़ासिम के नाम से इतिहास में जानी जाती है। और वर्तमान में उसे लोग मुंगेर के नाम से जानते हैं। और वहां के बारे में एक कहावत बहुत प्रचलित है- 'मुंगेरी लाल के हसीन सपने'। बिहार को लेकर बीजेपी 'मुंगेरी लाल के हसीन सपने' देख रही है। ख़बरदार ! टोकिएगा नहीं। कुछ बोलिएगा नहीं। बीजेपी अभी नींद में है। संघ ने उसे सौग़ातनुमा नींद की गोली दी है। और उस गोली को खाकर बीजेपी सपने देख रही है। वह दिवास्वप्न काफ़ूर न हो। तबतक बीजेपी के खेल को समझिए। उसका तमाशा देखिए।

(लेखक प्रिंट व इलेक्ट्रोनिक मीडिया के वरिष्ठ पत्रकार हैं)

बहरहाल संघ ने बीजेपी को मुसलमानों के क़रीब होने का एक मंत्र दिया है। बीजेपी की भावना संघ के प्रति तो अब भी कुछ न कुछ है। लेकिन मुसलमानों के प्रति एकदम नहीं है। बीजेपी ने 2014 से मुसलमानों को गद्दार समझना शुरू किया है। अब इस समझ को जाने में थोड़ा समय तो लगेगा। बीजेपी तो चाहती है कि देश से मुसलमान ही चला जाए। सीएए, एनआरसी और शाहीन बाग़ जैसे मुद्दों से भी वह मुसलमानों का कुछ बिगाड़ न सकी, तो यूपी के सहारे बुलडोज़र का खेल खेला। चुन-चुन कर मुस्लिम घरों को ज़मींदोज किया गया। अदालतें चुप्पी साधे रहीं। सुप्रीम कोर्ट अपने कोर्ट में ही घुसी रही। बाबा का बुलडोज़र शान से चलता रहा। अब जब सारे निशाने पर रहे मुसलमानों के घर बुलडोज़र से तबाह हो गएं, तो अदालतें नींद से जागीं। और कहने लगी कि ये सही नहीं है।

ये भी सच है कि बीजेपी का अल्पसंख्यक विभाग मरा हुआ था। इनके पदाधिकारियों के पैर में शर्म की ज़ंग लग गई थी। वे अपना मुंह मुसलमानों के सामने कैसे ले जाते? यानी उन्हें मुसलमानों के सामने कुछ बोलने का मुंह ही नहीं था। अब वे इस मुहिम से मुसलमानों के सामने जाएंगे। कहेंगे कि देखिए प्रधानमंत्री का

ईद उल फ़ितर शांति भाईचारा सांप्रदायिक सौहार्द एवं अमन का पैग़ाम देता है

ईश्वर अस्पताल की ओर से जिले के तमाम मुस्लिम भाइयों को बहुत-बहुत शुभकामनाएं

डॉक्टर संजय कुमार

निदेशक, ईश्वर अस्पताल, संरक्षक पैग़ाम ए अमन कमेटी, बेगूसराय

हरियाणा की रागनी कला लुप्तता के कगार पर

डॉ. सत्यवान सौरभ
वरिष्ठ स्तंभकार, हरियाणा

हरियाणा की लोकसंस्कृति में रागनी एक महत्त्वपूर्ण कला है, जो समय के साथ धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही है। यह न केवल मनोरंजन का माध्यम रही है, बल्कि सामाजिक संदेश देने, वीर रस जगाने और लोक इतिहास को संजोने का एक प्रभावशाली जरिया भी रही है। हरियाणा की रागनी न केवल मनोरंजन का एक सशक्त माध्यम रही है, बल्कि समाज सुधार की दिशा में भी इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। यह लोककला सिर्फ.संगीत नहीं, बल्कि एक आंदोलन रही है, जिसने लोगों को जागरूक किया, बुराइयों के खिलाफ खड़ा किया और समाज को एक नई दिशा देने का प्रयास किया। हरियाणवी रागनी लोकसंस्कृति का अभिन्न अंग रही है और इसके प्रचार-प्रसार में जाहरवीर कल्लू खां, अजीत सिंह गोरखपुरिया, दयाचंद लांबा, राजेंद्र खड़खड़ी, जसमेर खरकिया, सुरेंद्र भादू, सूरजभान बलाली, मामन खान, सतीश ठेठ, कविता कसाना के साथ-साथ और भी कई महान कलाकारों का योगदान रहा है। आज भी कई युवा कलाकार रागनी को आगे बढ़ा रहे हैं और इसे डिजिटल मंचों के माध्यम से नई ऊँचाइयों तक ले जाने का प्रयास कर रहे हैं। हरियाणवी रागनी को जीवित रखने में संदीप सरगथलिया, वीर सिंह फौजी, धर्मवीर नागर, राजबाला, मास्टर छोटूराम बड़वा जैसे कई कलाकारों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। इनकी मेहनत और समर्पण से यह लोककला आज भी जीवित है, हालाँकि इसे और संरक्षण और प्रोत्साहन की जरूरत है।

रागनी हरियाणवी लोकगीतों और कविताओं का एक विशिष्ट रूप है, जिसे मुख्य रूप से हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और राजस्थान के कुछ हिस्सों में गाया जाता है। इसमें वीरता, प्रेम, भक्ति, सामाजिक मुद्दों और ऐतिहासिक घटनाओं का चित्रण किया जाता है। पहले यह कला अखाड़ों और मेलों में बहुत लोकप्रिय थी, जहाँ गायक अपनी आवाज और जोश के साथ लोगों को मंत्रमुग्ध कर देते थे। रागनी के माध्यम से महिलाओं के अधिकारों, शिक्षा और समानता पर जोर दिया गया। कई लोकप्रिय रागनियों में बाल विवाह, दहेज प्रथा और महिलाओं पर अत्याचारों का विरोध किया गया है। 'बेटी पढ़ाओ, बेटी बचाओ' जैसे संदेशों को रागनी ने जन-जन तक पहुँचाया। हरियाणवी समाज में जातिगत भेदभाव को खत्म करने और समानता का संदेश देने में रागनी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। कई प्रसिद्ध रागनियों ने बताया कि सभी मनुष्य समान हैं और कर्म को जाति से ऊपर रखना चाहिए। रागनी के माध्यम से शराब, जुए और अन्य नशों की लत से बचने के संदेश दिए गए। कलाकारों ने इन बुराइयों को जड़ से उखाड़ने के लिए प्रेरक गीत गाए। उदाहरणः 'सुणले रे छोरे, बीड़ी-सिगरेट मत पीजा, तन्ने मां-बाप सूँ किट्टे तै प्यारा' (एक रागनी जिसमें धूम्रपान के नुकसान बताए गए हैं)। हरियाणा की ग्रामीण जनता के लिए रागनी एक ताकत बनी। इसमें किसानों की समस्याओं, मजदूरों के अधिकारों और सरकार से उनकी मांगों को जोरदार तरीके से उठाया गया। उदाहरणः कई रागनियों में किसान आंदोलनों, फसल के सही दाम और सरकार की नीतियों पर सवाल उठाए गए हैं।

ब्रिटिश राज के दौरान रागनी स्वतंत्रता सेनानियों के लिए एक प्रभावशाली हथियार बनी। लोकगायक अपनी रचनाओं के माध्यम से जनता में देशभक्ति

की भावना भरते थे और अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह का आह्वान करते थे। आज के दौर में भी रागनी समाज सुधार का माध्यम बनी हुई है। डिजिटल मीडिया और मंचों पर युवा कलाकार सामाजिक मुद्दों पर रागनी प्रस्तुत कर रहे हैं। हरियाणवी लोकसंस्कृति की पहचान रागनी समय के साथ लुप्त होती जा रही है। कभी गांवों के चौपालों, मेलों और अखाड़ों में गूंजने वाली यह कला अब केवल कुछ पुराने कलाकारों और रसिकों तक सीमित रह गई है। इसके लुप्त होने के पीछे कई सामाजिक, सांस्कृतिक और तकनीकी कारण ज़िम्मेदार हैं। पहले के समय में गांवों में बैठकर बुजुर्ग अपनी अगली पीढ़ी को लोकगीत और रागनी सिखाते थे, लेकिन अब यह परंपरा समाप्त हो रही है। लोकगीतों और रागनी को नयी शैली में ढालने का प्रयास कम हुआ है, जिससे यह लोगों के लिए कम प्रासंगिक हो गई है। नवीन मनोरंजन साधनों टीवी, इंटरनेट और पॉप संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के कारण युवा पीढ़ी लोककला से दूर होती जा रही है। आधुनिक संगीत उद्योग में रागनी को वह स्थान नहीं मिला जो अन्य संगीत शैलियों को मिला है। युवा पीढ़ी इसे करियर के रूप में अपनाने के लिए प्रेरित नहीं हो रही है। इस कला को संरक्षित करने के लिए कोई औपचारिक संस्थान या पाठ्यक्रम उपलब्ध नहीं हैं।

रागनी को नए संगीत वाद्ययंत्रों और आधुनिक ध्वनि तकनीक के साथ प्रस्तुत किया जाए, ताकि यह युवाओं को भी आकर्षित कर सके। हरियाणवी फिल्म और म्यूजिक इंडस्ट्री में रागनी को स्थान दिया जाए। रागनी को रैप और हिप-हॉप जैसी आधुनिक शैलियों के साथ मिलाकर फ्यूजन रागनी तैयार की जाए, जिससे यह युवाओं तक प्रभावी रूप से पहुंचे। हरियाणवी लोकसंस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण अंग रागनी आज विलुप्ति के कगार पर है। मनोरंजन के आधुनिक साधनों के आगमन और बदलते सामाजिक परिवेश के कारण यह कला पिछड़ती जा रही है। यदि समय रहते इसके संरक्षण के प्रयास नहीं किए गए, तो आने वाली पीढ़ियों को यह विरासत केवल किताबों में ही देखने को मिलेगी। स्कूलों और कॉलेजों में रागनी को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाए, ताकि युवा पीढ़ी इसकी जड़ों से जुड़ सके। विश्वविद्यालयों में लोककला और संगीत की पढ़ाई के अंतर्गत रागनी पर शोध को बढ़ावा दिया जाए। बच्चों को पारंपरिक संगीत में रुचि दिलाने के लिए सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाएं। सरकार और सांस्कृतिक संस्थानों को लोक महोत्सवों में रागनी को विशेष स्थान देना चाहिए। यूट्यूब, पॉडकास्ट और सोशल मीडिया के माध्यम से इसे युवाओं तक पहुँचाया जा सकता है। स्कूलों और कॉलेजों में रागनी की शिक्षा दी जानी चाहिए। लोक कलाकारों को आर्थिक और सामाजिक समर्थन दिया जाना चाहिए।

रागनी केवल एक गीत शैली नहीं, बल्कि हरियाणा की संस्कृति की पहचान है। यदि इसे संरक्षित करने के लिए उचित कदम नहीं उठाए गए, तो यह अमूल्य धरोहर धीरे-धीरे विलुप्त हो जाएगी। अब समय आ गया है कि हम इसे फिर से लोकप्रिय बनाएं और इसकी समृद्ध परंपरा को आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाएँ। रागनी केवल लोकगायन नहीं, बल्कि समाज को जागरूक करने का सशक्त माध्यम है। यह सामाजिक बुराइयों के खिलाफ आवाज उठाने, सुधार की ओर प्रेरित करने और बदलाव लाने की ताकत रखती है। अगर इसे सही दिशा में प्रोत्साहित किया जाए, तो यह समाज सुधार की एक मजबूत नींव बन सकती है। 'रागनी सिर्फ गीत नहीं, ये समाज की आवाज है !' , 'लोककला हमारी पहचान है, इसे बचाना हमारी शान है !'

(लेखक के अपने विचार हैं)

रमेश सर्राफ धमोरा
वरिष्ठ स्तंभकार, राजस्थान

राजस्थान का लोकोत्सव गणगौर

गणगौर एक प्रमुख त्योहार है। यह मुख्य रूप से राजस्थान, हरियाणा, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के ब्रज क्षेत्र में मनाया जाता है। गणगौर दो शब्दों गण और गौर से बना है। इसमें गण का अर्थ भगवान शिव और गौर का अर्थ माता पार्वती से है। इस दिन अविवाहित कन्याएं और विवाहित स्त्रियां भगवान शिव, माता पार्वती की पूजा करती हैं। साथ ही उपवास रखती हैं। कई क्षेत्रों में भगवान शिव को ईसर जी और देवी पार्वती को गौरा माता के रूप में पूजा जाता है। गौरा जी को गवरजा जी के नाम से भी जाना जाता है। धर्मग्रंथों के अनुसार श्रद्धाभाव से इस व्रत का पालन करने से अविवाहित कन्याओं को इच्छित वर की प्राप्ति होती है और विवाहित स्त्रियों के पति को दीघार्यु और आरोग्य की प्राप्ति होती है।

राजस्थानी परंपरा के लोकोत्सव अपने में एक विरासत को संजोए हुए हैं। राजस्थान को देव भूमि कहा जाय तो गलत नहीं होगा। यहां सभी सम्प्रदाय फले फूले हैं। यहां के शासकों ने विश्व कल्याण की भवना से अभिभूत होकर लोक मान्यताओं का सम्मान किया है। इसी कारण यहां सभी देवी देवताओं के उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाए जाते हैं। गणगौर का उत्सव भी ऐसा ही लोकोत्सव है। जिसकी पृष्ठ भूमि पौराणिक है। समय के प्रभाव से उनमें शास्त्राचार के स्थान पर लोकाचार हावी हो गया है। लेकिन भाव भंगिमा में कोई कमी नहीं आई है।

गणगौर भी राजस्थान का ऐसा ही एक प्रमुख लोक पर्व है। लगातार 17 दिनों तक चलने वाला गणगौर का पर्व मूलतः कुंवारी लड़कियों व महिलाओं का त्योहार है। राजस्थान की महिलाएं चाहे दुनिया के किसी भी कोने में हो गणगौर के पर्व को पूरी उत्साह के साथ मनाती है। विवाहिता एंव कुवारी सभी आयु वर्ग की महिलायें गणगौर की पूजा करती है। होली के दूसरे दिन से सोलह दिनों तक लड़कियां प्रतिदिन प्रातः काल ईसर-गणगौर को पूजती हैं। जिस लड़की की शादी हो जाती है वो शादी के प्रथम वर्ष अपने पीहर जाकर गणगौर की पूजा करती है। इसी कारण इसे सुहागपर्व भी कहा जाता है।

राजस्थान की राजधानी जयपुर में गणगौर उत्सव दो दिन तक धूमधाम से मनाया जाता है। सरकारी कार्यालयों में आधे दिन का अवकाश रहता है। ईसर और गणगौर की प्रतिमाओं की शोभायात्रा राजमहल से निकलती है। इनको देखने बड़ी संख्या में देशी-विदेशी सैनानी उमड़ते हैं। सभी उत्साह से भाग लेते हैं। इस उत्सव पर एकत्रित भीड़ जिस श्रृद्धा एवं भक्ति के साथ धार्मिक अनुशासन में बंधी गणगौर की जय-जयकार करती हुई भारत की सांस्कृतिक परम्परा का निर्वाह करती है उसे देख कर अन्य धर्मावलम्बी भी इस संस्कृति के प्रति श्रृद्धा भाव से ओतप्रोत हो जाते हैं। ढूंढाड़ की भांति ही मेवाड़, हाड़ौती, शेखावाटी सहित इस मरुधर प्रदेश के विशाल नगरों में ही नहीं बल्कि गांव-गांव में गणगौर पर्व मनाया जाता है एवं ईसर-गणगौर के गीतों से हर घर गुंजायमान रहता है।

कहा जाता है कि चैत्र शुक्ला तृतीया को राजा हिमाचल की पुत्री गौरी का विवाह शंकर भगवान के साथ हुआ था। उसी की याद में यह त्यौहार मनाया जाता है। गणगौर व्रत गौरी तृतीया चैत्र शुक्ल तृतीया तिथि को किया जाता है। इस व्रत का राजस्थान में बड़ा महत्व है। कहते हैं इसी व्रत के दिन देवी पार्वती ने अपनी उंगली से रक्त निकालकर महिलाओं को सुहाग बांटा था। इसलिए महिलाएं इस दिन गणगौर की पूजा करती हैं। कामदेव मदन की पत्नी रति ने भगवान शंकर की तपस्या कर उन्हें प्रसन्न कर लिया तथा उन्हीं के तीसरे नेत्र से भष्म हुए अपने पति को पुनः जीवन देने की प्रार्थना की। रति की प्रार्थना से प्रसन्न हो भगवान शिव ने कामदेव को पुनः जीवित कर दिया तथा विष्णुलोक जाने का वरदान दिया। उसी की स्मृति में प्रतिवर्ष गणगौर का उत्सव मनाया जाता है। गणगौर पर्व पर विवाह के समस्त नेगचार व रस्में की जाती है।

होलिका दहन के दूसरे दिन गणगौर पूजने वाली लड़कियां होली दहन की राख लाकर उसके आठ पिण्ड बनाती हैं एवं आठ पिण्ड गोबर के बनाती हैं। उन्हें दूब पर रखकर प्रतिदिन पूजा करती हुई दीवार पर एक काजल व एक रोली की टिकी लगाती हैं। शीतलाष्टमी तक इन पिण्डों को पूजा जाता है। फिर मिट्टी से ईसर गणगौर की मूर्तियां बनाकर उन्हें पूजती हैं। लड़कियां प्रातः ब्रह्ममुहुर्त में गणगौर पूजते हुये गीत गाती हैंः-

गौर ये गणगोर माता खोल किवाड़ी, छोरी खड़ी है तन पूजण वाली।

गीत गाने के बाद लड़कियां गणगौर की कहानी सुनती है। दोपहर को गणगौर के भोग लगाया जाता है तथा कुए से लाकर पानी पिलाया जाता है। लड़कियां कुए से ताजा पानी लेकर गीत गाती हुई आती हैंः-

म्हारी गौर तिसाई ओ राज घाट्यारी मुकुट करो,
बीरमदासजी रो ईसर ओराज, घाटी री मुकुट करो,
म्हारी गौरल न थोड़ो पानी पावो जी राज घाटीरी मुकुट करो।

लड़कियां गीतों में गणगौर के प्यासी होने पर काफी चिन्तित लगती है एवं गणगौर को जल्दी से पानी पिलाना चाहती है। पानी पिलाने के बाद गणगौर को गेहूं चने से बनी घूघरी का प्रसाद लगाकर सबको बांटा जाता है और लड़कियां गीत गाती हैंः-

म्हारा बाबाजी के माण्डी गणगौर, दादसरा जी के माण्ड्यो रंगरो झूमक-ड़ो,

ल्यायोजी - ल्यायो ननद बाई का बीर, ल्यायो हजारी ढोला झुमकड़ो।

रात को गणगौर की आरती की जाती है तथा लड़कियां नाचती हुई गाती हैं। गणगौर पूजन के मध्य आने वाले एक रविवार को लड़कियां उपवास करती हैं। प्रतिदिन शाम को क्रमवार हर लडकी के घर गणगौर ले जायी जाती है। जहां गणगौर का 'बिन्दौरा' निकाला जाता है तथा घर के पुरुष लड़कियों को भेंट देते हैं। लड़कियां खुशी से झूमती हुई गाती हैंः-

ईसरजी तो पेंचो बांध गोराबाई पेच संवार ओ राज म्हे ईसर थारी सालीछां।

गणगौर विसर्जन के पहले दिन गणगौर का सिंजारा किया जाता है। लड़कियां मेहन्दी रचाती हैं। नये कपड़े पहनती हैं, घर में पकवान बनाये जाते हैं। सत्रहवें दिन लड़कियां नदी, तालाब, कुए, बावड़ी में ईसर गणगौर को विसर्जित कर विदाई देती हुई दुःखी हो गाती हैंः-

गोरल ये तू आवड़ देख बावड़ देख तन बाई रोवा याद कर।

गणगौर की विदाई का बाद कई महिनो तक त्यौहार नहीं आते इसलिए कहा गया है-'तीज त्यौहारा बावड़ी ले डूबी गणगौर'। अर्थात जो त्यौहार तीज (श्रावणमास) से प्रारम्भ होते हैं उन्हें गणगौर ले जाती है। ईसर-गणगौर को शिव पार्वती का रूप मानकर ही बालाऐं उनका पूजन करती हैं। गणगौर के बाद बसन्त ऋतु की विदाई व ग्रीष्म ॠतु की शुरूआत होती है। दूर प्रान्तों में रहने वाले युवक गणगौर के पर्व पर अपनी नव विवाहित प्रियतमा से मिलने अवश्य आते हैं। जिस गोरी का साजन इस त्यौहार पर भी घर नहीं आता वो सजनी नाराजगी से अपनी सास को उलाहना देती है। 'सासू भलरक जायो ये निकल गई गणगौर, मोल्यो मोड़ों आयो रे'।

गणगौर महिलाओं का त्योहार माना जाता है इसलिए गणगौर पर चढ़ाया हुआ प्रसाद पुरुषों को नहीं दिया जाता है। गणगौर के पूजन में प्रावधान है कि जो सिंदूर माता पार्वती को चढ़ाया जाता है महिलाएं उसे अपनी मांग में सजाती हैं। शाम को शुभ मुहूर्त में गणगौर को पानी पिलाकर किसी पवित्र सरोवर या कुंड आदि में इनका विसर्जन किया जाता है।

आज आवश्यकता है इस लोकोत्सव को अच्छे वातावरण में मनाये। हमारी प्राचीन परम्परा को अक्षुण बनाये रखे। इसका दायित्व है उन सभी सांस्कृतिक परम्परा के प्रेमियों पर है जिनका इससे लगाव है। जो ऐसे पर्वो को सिर्फ पर्यटक व्यवसाय की दृष्टि से न देखकर भारत के सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से देखने के हिमायती हैं।अब राजस्थान पर्यटन विभाग की वजह से हर साल मनाए जाने वाले इस गणगौर उत्सव में शामिल होने कई देशी-विदेशी पर्यटक भी पहुँचने लगे हैं।

(लेखक राजस्थान सरकार से मान्यता प्राप्त स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

शादी के बाद का करियर कुछ उड़ान कुछ उलझन

प्रियंका सौरभ

सोचिए, एक लड़की ने अपने करियर के लिए दिन-रात मेहनत की, डिग्रियाँ लीं, अनुभव जुटाया और फिर... शादी हुई! और शादी के बाद? अक्सर वही होता है, जो पीढ़ियों से होता आया है—करियर या तो ठहर जाता है या धीरे-धीरे गुमनाम हो जाता है। हमारे समाज में शादी को महिलाओं के जीवन का 'मील का पत्थर' माना जाता है। लेकिन सवाल यह है कि यह मील का पत्थर करियर की सड़क को आगे बढ़ाने का काम करता है या उस पर एक बड़ा ब्रेक लगा देता है?

हमारे समाज में शादी को महिलाओं के जीवन का ?टर्निंग पॉइंट? माना जाता है। लेकिन सवाल यह है कि यह टर्निंग पॉइंट आगे बढ़ाने के लिए होता है या पीछे धकेलने के लिए? कई बार परिवार, समाज और खुद महिलाओं की भी यह सोच बन जाती है कि शादी के बाद करियर प्राथमिकता नहीं रह जाता। कई बार महिलाओं को यह सोचने पर मजबूर कर दिया जाता है कि करियर और शादी साथ नहीं चल सकते। परिवार, समाज और कभी-कभी खुद महिलाएं भी मान लेती हैं कि शादी के बाद करियर कम प्राथमिकता वाला हो जाता है। क्या यह सही है? या यह सिर्फ एक सामाजिक धारणा है जिसे बदलने की जरूरत है?

कितनी बार हमने सुना है कि शादी के बाद महिलाएं करियर छोड़कर ?घर संभालने? में लग जाती हैं? अगर शादी से पहले वे एक शानदार कॉर्पोरेट जॉब में थीं, तो शादी के बाद यह सवाल उठता है—'अब ऑफिस और घर दोनों कैसे मैनेज करोगी?' और इसका हल अक्सर यही निकलता है— 'करियर छोड़ दो!?' शादी के बाद परिवार और समाज अक्सर महिलाओं से यह अपेक्षा करता है कि वे करियर की बजाय घरेलू जिम्मेदारियों को प्राथमिकता दें। यह सोच क्यों है? क्या पुरुषों से भी यही अपेक्षा की जाती है?

महिलाओं के सपने और करियर किसी 'सेल' में रखे सामान की तरह डिस्काउंट पर चले जाते हैं— 'तुम्हारा पैशन बाद में, पहले परिवार!' 'पति की जॉब ज्यादा जरूरी है, तुम्हारी तो बस टाइमपास थी!' 'घर पर रहोगी तो बच्चों को बेहतर परवरिश मिलेगी!'

मातृत्व आते ही महिलाओं के करियर को 'मॉमी ट्रैक' पर डाल दिया जाता है। यानी, प्रोमोशन की रेस से बाहर, साइड रोल में डाल दिया जाता

है। वर्कप्लेस पर भी उन्हें कम महत्व दिया जाता है, क्योंकि माना जाता है कि अब वे 'फुल टाइम करियर' के लिए उतनी प्रतिबद्ध नहीं रहेंगी। मातृत्व के बाद कई महिलाओं को नौकरी छोड़ने के लिए मजबूर किया जाता है, जबकि पुरुषों के करियर पर इसका असर नहीं पड़ता। क्या यह लैंगिक असमानता का एक रूप नहीं है? क्या कंपनियाँ अधिक लचीली नीतियाँ अपनाकर महिलाओं को सपोर्ट कर सकती हैं?

क्या शादी के बाद पुरुषों से पूछा जाता है– 'अब करियर का क्या करोगे?'

नहीं ना? यही सवाल अगर महिलाओं से पूछा जाता है, तो यह खुद ही बता देता है कि समस्या कहां है। शादी और करियर को एक साथ संतुलित करने वाली महिलाओं के उदाहरण भी मौजूद हैं। क्या यह संभव नहीं कि शादी करियर के लिए नया सहयोग और समर्थन लेकर आए? कई कपल्स मिलकर एक-दूसरे के करियर को आगे बढ़ाने का काम करते हैं। क्या यह एक नए नजरिए की जरूरत नहीं है?

ग्रामीण भारत में शादी के बाद महिलाओं के करियर की स्थिति और भी चुनौतीपूर्ण हो जाती है। पारंपरिक सोच, शिक्षा की कमी और अवसरों की अनुपलब्धता के कारण कई महिलाएं शादी के बाद आर्थिक रूप से स्वतंत्र नहीं रह पातीं। हालांकि, सेल्फ हेल्प ग्रुप, ग्रामीण उद्यमिता और सरकारी योजनाओं के माध्यम से अब बदलाव आ रहा है। उदाहरण के लिए: सखी मंडल और स्वयं सहायता समूह के माध्यम से महिलाएं छोटे व्यवसाय चला रही हैं। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना से कई महिलाओं ने अपने स्वयं के व्यवसाय शुरू किए। डिजिटल इंडिया पहल के कारण अब महिलाएं ऑनलाइन बिजनेस कर रही हैं। डेयरी, सिलाई, कढ़ाई, बागवानी और कृषि आधारित व्यवसायों में महिलाएं आगे बढ़ रही हैं।

रिपोर्ट के अनुसार, भारत में सिर्फ 20% महिलाएं कार्यबल में बनी रहती हैं, जबकि स्नातक स्तर पर उनकी भागीदारी पुरुषों के बराबर होती है। शादी के बाद लगभग 47% भारतीय महिलाएं अपना करियर छोड़ देती हैं। शादीशुदा महिलाओं की कमाई 15-20% तक कम हो जाती है। 85% भारतीय महिलाओं का मानना है कि शादी और बच्चों के कारण उन्हें करियर में बाधाएँ झेलनी पड़ती हैं। भारत में 30 वर्ष से ऊपर की महिलाओं की कार्यबल भागीदारी सिर्फ 18% रह जाती है, जबकि पुरुषों के लिए यह संख्या 78% है।

इंद्रा नूयी शादीशुदा होने के बावजूद अपने करियर को बनाए रखने में सफल रहीं। उन्होंने अपनी किताब में बताया है कि कैसे उन्होंने अपने परिवार और करियर को संतुलित किया, और कैसे कंपनियों को महिलाओं के लिए सहायक कार्यस्थल बनाने की जरूरत है। किरन मजूमदार शॉ ने शादी और समाज की अपेक्षाओं के बावजूद उन्होंने अपनी बायोटेक कंपनी खड़ी की। उनके अनुसार, परिवार से समर्थन मिलने पर शादी के बाद भी महिलाएँ सफलतापूर्वक अपने करियर को आगे बढ़ा सकती हैं। टेनिस स्टार सेरेना विलियम्स ने मातृत्व के बाद भी खेल में वापसी की और कई खिताब जीते। उन्होंने इस मिथक को तोड़ा कि मां बनने के बाद करियर को छोड़ना ही एकमात्र विकल्प है।

परिवारों को यह समझना होगा कि शादी का मतलब महिलाओं के करियर का अंत नहीं होता। पुरुषों को घर और बच्चों की जिम्मेदारी में बराबर भागीदारी निभानी चाहिए। कंपनियों को महिलाओं के लिए अधिक फ्लेक्सिबल जॉब ऑप्शंस देने चाहिए। करियर और शादी को विरोधी ध्रुवों की तरह देखने की बजाय उन्हें साथ ले चलने की जरूरत है। पुरुषों को भी घर और बच्चों की जिम्मेदारी में बराबर भागीदार बनना चाहिए। कंपनियों को फ्लेक्सिबल वर्किंग ऑप्शंस देने चाहिए, ताकि महिलाएं आसानी से दोनों भूमिकाएँ निभा सकें।

शादी एक नया चैप्टर हो सकती है, 'दी एंड' नहीं!

शादी का मतलब किसी भी महिला के करियर का 'दी एंड' नहीं होना चाहिए। बल्कि यह एक ऐसा पड़ाव होना चाहिए जहां से वह अपनी निजी और प्रोफेशनल जिंदगी को संतुलित तरीके से आगे बढ़ा सके। अगली बार जब कोई कहे–'शादी के बाद करियर का क्या?' तो जवाब होना चाहिए–'जो पहले था, वही रहेगा–बस और बेहतर!'

गौरैया के बिना

लिलित गर्ग

गौरैया विलुप्त होने की कगार पर पंहुची विश्व की सबसे पुरानी पक्षी प्रजाति है। सुदूर अतीत से पिछले एक-दो दशक तक हमारे घर-आंगन में फुदकने वाली एवं हमारे जीवन संगीत का अहम हिस्सा गौरैया आज विलुप्ति के कगार पर है। घरों को अपनी चीं-चीं से चहकाने वाली गौरैया अब दिखाई नहीं देती। इस छोटे आकार वाले खूबसूरत एवं शांतिपूर्ण पक्षी का कभी इंसान के घरों में बसेरा हुआ करता था और बच्चे बचपन से इसे देखते हुए बड़े हुआ करते थे। ज्यादा से ज्यादा लोग गौरैया के साथ इंसानी संपर्क के महत्व को समझे एवं इस नन्हें से परिंदे को बचाने के उद्देश्य से ही प्रतिवर्ष 20 मार्च को विश्व गौरैया दिवस मनाने की एक परंपरा की शुरूआत की गई है। नेचर फोरेवर सोसाइटी (भारत) और इको-सिस एक्शन फाउंडेशन (फ्रांस) के मिले जुले प्रयास के कारण इस दिवस को मनाने की शुरूआत 2010 में हुई। नासिक निवासी भारतीय प्रकृति एवं संरक्षणवादी डॉ.मोहम्मद दिलावर ने घरेलू गौरैया पक्षियों की सहायता हेतु नेचर फोरेवर सोसाइटी की स्थापना की थी। इनके इस कार्य को देखते हुए टाइम ने 2008 में इन्हें हिरोज ऑफ दी एनवायरमेंट नाम दिया था।

भारत में गौरैया आम जनजीवन का हिस्सा हुआ करती थी, उनकी संख्या घटने के पीछे कई कारण हैं। बढ़ता शहरीकरण और पेड़ों की कटाई उनके घोंसले बनाने की जगहें खत्म कर रहे हैं। मोबाइल टावरों से निकलने वाले रेडिएशन उनकी प्रजनन क्षमता को प्रभावित कर रहे हैं। कीटनाशकों और रसायनों के बढ़ते उपयोग के कारण उनके भोजन के स्रोत कम हो रहे हैं। इसके अलावा, आधुनिक घरों की वास्तुकला में ऐसी संरचनाएं नहीं होतीं जहां गौरैया अपना घोंसला बना सके, जिससे उनके अस्तित्व पर संकट बढ़ता जा रहा है। विशेषतः यह पक्षी मानवीय लोभ की भेंट तो चढ़ ही रहे हैं, जलवायु परिवर्तन के कारण भी इनकी संख्या लगातार कम हो रही है। कानूनों की धज्जियां उड़ाते हुए पक्षियों का शिकार एवं अवैध व्यापार जारी है। माइक्रोवेव प्रदूषण जैसे कारण इनकी घटती संख्या के लिए जिम्मेदार हैं। जन्म के शुरूआती पंद्रह दिनों में गौरैया के बच्चों का भोजन कीट-पतंग होते हैं। पर आजकल हमारे बगीचों में विदेशी पौधे ज्यादा उगाते हैं, जो कीट-पतंगों को आकर्षित नहीं कर पाते। जीवन के अनेकानेक सुख, संतोष एवं रोमांच में से एक यह भी है कि हम कुछ समय पक्षियों के साथ बिताने में लगाते रहे हैं, अब ऐसा क्यों नहीं कर पाते? क्यों हमारी सोच एवं जीवनशैली का प्रकृति-प्रेम विलुप्त हो रहा है? मनुष्य के हाथों से रचे कृत्रिम संसार की परिधि में प्रकृति, पर्यावरण, वन्यजीव-जंगल एवं पक्षियों का कलरव एवं जीवन-ऊर्जा का लगातार खत्म होते जाना जीवन से मृत्यु की ओर बढ़ने का संकेत है।

विश्व गौरैया दिवस गौरेया के संरक्षण और उसके सामने आने वाली

चुनौतियों के प्रति जागरूक करने के लिये मनाया जाता है। यह दिन हमें याद दिलाता है कि पक्षियों की सुरक्षा केवल उनके अस्तित्व के लिए ही नहीं, बल्कि संपूर्ण जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखने के लिए भी जरूरी है। जैसे-जैसे पर्यावरणीय समस्याएं बढ़ रही हैं, वैसे-वैसे गौरैया और अन्य शहरी पक्षियों की सुरक्षा और भी महत्वपूर्ण हो गई है। दिल्ली में तो गौरैया इस कदर दुर्लभ हो गई है कि ढूंढे से भी यह पक्षी देखने को नहीं मिलता, इसलिए वर्ष 2012 में दिल्ली सरकार ने इसे राज्य-पक्षी घोषित कर दिया था। गौरैया के अस्तित्व पर मंडरा रहा खतरा मानवता पर भी एक प्रश्नचिह्न भी है। गौरेया जैसे बेजुबान पक्षियों का बड़ी संख्या में विलुप्त होना पर्यावरण संतुलन के लिये तो बड़ा खतरा है ही लेकिन इसका असर मानव जीवन पर भी होगा। यह धरती केवल इंसानों के लिये नहीं है, बल्कि वन्य जीवों के लिये भी है, इसलिये पक्षियों का विलुप्त होना या मरना हमारे लिये चिन्ता का बड़ा कारण बनना चाहिए। मौजूदा समय में पशुओं एवं पक्षियों की संख्या का लगातार घटना एक अत्यन्त चिन्ताजनक स्थिति है। मानवीय व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण घटक है संवेदनशीलता, जो व्यक्तित्व का गरिमा प्रदान करता है, उसे गहराई एवं ऊंचाई प्रदान करता है, इसके अभाव में मानव दानव बन जाता है, गौरैया जैसे पक्षियों के प्रति बरती जा रही संवेदनहीनता इसी की परिचायक है।

मनुष्य का लोभ एवं संवेदनहीनता भी त्रासदी की हद तक बढ़ी है, जो वन्यजीवों, पक्षियों, प्रकृति एवं पर्यावरण के असंतुलन एवं विनाश का बड़ा सबब बना है। दरअसल हमारे यहां बड़े जीवों के संरक्षण पर तो ध्यान दिया जाता है, पर गौरेया जैसे छोटे पक्षियों के संरक्षण पर उतना नहीं। अब भी यदि हम जैव विविधता को बचाने का सामूहिक प्रयास न करें, तो बहुत देर हो जाएगी। पक्षी विज्ञानी हेमंत सिंह के अनुसार गौरैया की आबादी में 60 से 80 फीसदी तक की कमी आई है। यदि इसके संरक्षण के उचित प्रयास नहीं किए गए तो हो सकता है कि गौरैया इतिहास का प्राणी बन जाए और भविष्य की पीढ़ियों को यह देखने को ही न मिले। ब्रिटेन की ह्यरॉयल सोसायटी ऑफ प्रोटेक्शन ऑफ बर्डसह्न ने भारत से लेकर विश्व के विभिन्न हिस्सों में अनुसंधानकताओं द्वारा किए गए अध्ययनों के आधार पर गौरैया को 'रेड लिस्ट' में डाला है। आंध्र विश्वविद्यालय द्वारा किए गए अध्ययन के मुताबिक गौरैया की आबादी में करीब 60 फीसदी की कमी आई है। यह ह्रास ग्रामीण और शहरी, दोनों ही क्षेत्रों में हुआ है। पश्चिमी देशों में हुए अध्ययनों के अनुसार गौरैया की आबादी घटकर खतरनाक स्तर तक पहुंच गई है।

हर परिस्थितियों में खुद को अनुकूल बना लेने वाली यह चिड़िया अब भारत ही नहीं, यूरोप के कई बड़े हिस्सों में भी काफी कम रह गई है। ब्रिटेन, इटली, फ्राँस, जर्मनी और चेक गणराज्य जैसे देशों में इनकी संख्या जहाँ तेजी से गिर रही है, तो नीदरलैंड में तो इन्हें 'दुर्लभ प्रजाति' के वर्ग में रखा गया है। कई बार लोग अपने घरों में इस पक्षी के घोंसले को बसने से पहले ही उजाड़ देते हैं। कई बार बच्चे इन्हें पकड़कर पहचान के लिए इनके पैर में धागा बांधकर इन्हें छोड़ देते हैं। इससे कई बार किसी पेड़ की टहनी या शाखाओं में अटक कर इस पक्षी की जान चली जाती है। इतना ही नहीं कई बार बच्चे गौरैया को पकड़कर इसके पंखों को रंग देते हैं, जिससे उसे उड़ने में दिक्कत होती है और उसके स्वास्थ्य पर भी विपरीत असर पड़ता है। पक्षी विज्ञानियों के अनुसार गौरैया को फिर से बुलाने के लिए लोगों को अपने घरों में कुछ ऐसे स्थान उपलब्ध कराने चाहिए, जहां वे आसानी से अपने घोंसले बना सकें और उनके अंडे तथा बच्चे हमलावर पक्षियों से सुरक्षित रह सकें। गौरैया आजकल अपने अस्तित्व के लिए मनुष्यों और अपने आसपास के वातावरण से काफी जद्दोजहद कर रही है। ऐसे समय में हमें इन पक्षियों के लिए वातावरण को इनके प्रति अनुकूल बनाने में सहायता प्रदान करनी चाहिए। तभी ये हमारे बीच चह चहायेंगे।

मनुष्यों को गौरैया के लिए कुछ ना कुछ तो करना ही होगा, वरना यह भी मॉरीशस के डोडो पक्षी और गिद्ध की तरह पूरी तरह से विलुप्त हो जाएंगे। घरेलू गौरैया पृथ्वी पर सबसे आम और सबसे पुरानी पक्षी प्रजातियों में से एक है। हमें पक्षियों के स्वास्थ्य के प्रति भी सजग होना चाहिए। सरकारों को भी पक्षियों के इलाज एवं जीवन-सुरक्षा के पुख्ते प्रबंध करने चाहिए। भारत की संस्कृति में पक्षियों को दाना एवं पानी डालने की व्यवस्था जीवनशैली का अंग रहा है, इन वर्षों में हमारी यह संस्कृति लुप्त हो रही है, जो गौरैया के विलुप्त होने का बड़ा कारण है।

(लेखक स्तंभकार हैं)

विलुप्त के कगार पर घर की नन्हीं चिड़िया

विजय गर्ग

पक्षियों के संसार में कई पक्षी प्रजातियां गायब हो चुकी हैं, और कई विलुप्ति के कगार पर हैं. पहले घर आंगन में चहक.ने वाली गौरैया अब कम ही दिखती है, और इसके विलुप्त होने का खतरा बढ़ता जा रहा है. यह नन्ही चिड़िया आज लाल सूची में शामिल हो चुकी है।

हर किसी की जीवनशैली बदल गयी है। इस बदली जीवनशैली के कारण घर-आंगन में चहकने-फुदकने वाली छोटी सी प्यारी चिड़िया गौरैया इंसानों से दूर होते जा रही है। मनुष्यों की बढ़ती आबादी की वजह से आज पक्षियों का आशियाना कम होता जा रहा है. शहरीकरण की वजह से खेत और खलिहान भी कम होते जा रहे हैं. गौरैया जिसे हम 'मानव मित्र' कहते हैं, आज उनके रहने की जगह न के बराबर है. हालांकि गांवों में अब भी बेहतर माहौल होने की वजह से इनकी संख्या अच्छी खासी है, लेकिन शहर में स्थिति चिंताजनक है. लेकिन थोड़े से प्रयास करने पर लोग अपने आस-पास भी गौरैया की चहचहाहट आसानी से सुन सकते हैं. यही वजह है कि राजधानी के कई लोग इसके संरक्षण के लिए आगे आ रहे हैं।

राजधानी में भी गौरैया की घटती संख्या को लेकर कई कदम उठाए जा रहे हैं। यहां के कई नागरिक समाज, गैर सरकारी संगठन और सरकारी संस्थाएं गौरैया के संरक्षण के लिए जागरुकता फैलाने के काम में लगी हुई हैं। इन प्रयासों का उद्देश्य इस पक्षी की घटती संख्या को रोकना और उन्हें अपने प्राकृतिक आवास में पुनः स्थापित करना है।

ब्रिटेन की 'रॉयल सोसायटी ऑफ प्रोटेक्शन ऑफ बर्डस' और आंध्र विश्वविद्यालय के अध्ययनों के मुताबिक, गौरैया की आबादी में 60-80 फीसदी तक की कमी आयी है. इसी कारण, इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर ने 2016 में इसे रेड लिस्ट में शामिल किया था। इसके बावजूद, गौरैया समेत पक्षियों के विलुप्त होने का खतरा बना हुआ है।

जलवायु परिवर्तन और मानवीय गतिविधियां जैसे वनों की अंधाधुंध कटाई, शहरीकरण और कीटनाशकों का बढ़ता उपयोग, पक्षियों के लिए बड़ा खतरा बन चुके हैं। तापमान में वृद्धि और मौसम में हो रहे निरंतर बदलावों से गौरैया और अन्य पक्षियों का जीवन संकट में है. यह परिवर्तन उनके भोजन, आश्रय और प्रजनन की प्रक्रियाओं को प्रभावित कर रहा है, जिससे उनकी संख्या में गिरावट हो रही है।

भारत सरकार ने गौरैया को वन्य जीव संरक्षण अधिनियम, 1972 के अनुसूची-क्कमें शामिल किया है, ताकि इसका शिकार रोकने और संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके। इसके तहत, गौरैया को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए विशेष अनुमति जरूरी है। बावजूद इसके, इन कोशिशों के बावजूद गौरैया की आबादी में कोई महत्वपूर्ण बदलाव नहीं आया है।

गौरैया और अन्य पक्षियों की घटती आबादी के पीछे मुख्य कारण हैं झ कृषि में अत्यधिक कीटनाशकों का उपयोग, प्राकृतिक आवासों का नष्ट होना, और शहरीकरण। खेतों, बाग-बगीचों और तालाबों के स्थान पर कंक्रीट के जंगल बन गये हैं, जिससे पक्षियों के लिए भोजन और आश्रय की कमी हो रही है। यह स्थिति पक्षियों के अस्तित्व को और भी खतरनाक बना रही ह।

गौरैया की घटती आबादी का मुख्य कारण शहरीकरण और जलवायु परिवर्तन है। जब तक हम अपनी जीवनशैली में बदलाव नहीं लायेंगे, तब तक इसके संरक्षण के प्रयास अधूरे रहेंगे। घरों में गौरैया के लिए दाना पानी की व्यवस्था, कृत्रिम घोंसले बनाना, और शहरों में हरियाली बढ़ाना, इसके संरक्षण के उपाय हो सकते हैं। विशेषकर शहरी क्षेत्रों में, जहां कंक्रीट की दीवारें और शीशे की खिड़कियां पक्षियों के लिए खतरनाक साबित हो रही हैं, वहां हरियाली को बढ़ावा देना बेहद आवश्यक है।

गौरैया सहित पक्षियों की घटती आबादी केवल पर्यावरणीय संकट नहीं, बल्कि हमारे जीवन से जुड़े पारिस्थितिकी तंत्र में गहरी गड़बड़ी का संकेत है। इसके संरक्षण के लिए सभी को मिलकर काम करना होगा। हमें पुराने दिनों की तरह अपने घरों और आंगन में गौरैया को वापस लाने के लिए अपने प्रयासों को तेज करना होगा. हमें अपने घरों के आसपास छोटे-छोटे कदम उठाने होंगे, जैसे कि पक्षियों के लिए दाना-पानी रखना और उनके आवास के अनुकूल वातावरण तैयार करना। इसके अलावा, पेड़-पौधों को बढ़ावा देना और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना भी आवश्यक है। इस तरह के प्रयास से हम गौरैया और अन्य पक्षियों को सुरक्षित रख सकते हैं।

(लेखक मलोट पंजाब के सेवानिवृत्त प्रिंसिपल हैं)

दूसरा मत

ईद की हार्दिक शुभकामनाएं

पढ़ें और पढ़ाएं दूसरा मत

एक शुभचिंतक, दिल्ली

दीप्ति अंगरीश
महिला संबंधी मामलों की वरिष्ठ लेखिका

क्या बिजनेस मॉडल से तय होता है सिजेरियन डिलिवरी

इंट्रो - क्या आपको मालूम है कि सिजेरियन डिलीवरी या सी-सेक्शन दुनिया में सबसे अधिक की जाने वाली सर्जरी है? सिजेरियन सेक्शन बनाम नार्मल डिलीवरी का विषय काफी चर्चा में रहता है, खासकर तब जब इसका जरूरत से ज्यादा उपयोग होने लगे। कुछ लोग इसे एक बिजनेस मॉडल के रूप में देखते हैं तो कुछ इसे मेडिकल साइंस की उपलब्धि मानते हैं।

सिजेरियन डिलिवरी एक सर्जिकल प्रक्रिया है, जो तब की जाती है जब सामान्य (नार्मल) डिलिवरी संभव न हो या मां और बच्चे के स्वास्थ्य के लिए जोखिम हो। यदि ऐसा हो तो कोई सवाल ही नहीं उठता। मगर आजकल कई बार जरूरत न होने पर भी सिजेरियन डिलीवरी कराई जाती है। निजी अस्पतालों में इसे जल्दी और सुविधाजनक समाधान के रूप में देखा जाता है। सिजेरियन अपने आप में गलत नहीं है, लेकिन जब यह व्यावसायिक फायदे के लिए या बिना ठोस मेडिकल वजह के किया जाता है, तब यह चिंता का विषय बन जाता है।

सिजेरियन डिलीवरी तभी सही है जब यह मां और बच्चे की सुरक्षा के लिए जरूरी हो। अनावश्यक सर्जरी से बचना चाहिए, क्योंकि यह शारीरिक और मानसिक रूप से मां के लिए अधिक चुनौतीपूर्ण हो सकता है। सही जागरूकता और जिम्मेदारी से ही इस समस्या का समाधान संभव है।

पिछले कुछ सालों में भारत सहित कई देशों में सिजेरियन डिलीवरी की दर तेजी से बढ़ी है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (हल्ड) के अनुसार, केवल 10-15% मामलों में ही सिजेरियन आवश्यक होता है, लेकिन कई देशों में यह दर 50% या उससे अधिक हो चुकी है।

नीति आयोग की रिपोर्ट के अनुसार, भारत के निजी अस्पतालों में सिजेरियन डिलीवरी की दर 40-50% तक पाई गई, जबकि सरकारी अस्पतालों में यह लगभग 20-25% थी। स्वास्थ्य बीमा योजना और जननी-शिशु सुरक्षा कार्यक्रम जैसी योजनाओं में बिना आवश्यकता के मरीजों की सर्जरी कर दी जाती है, जिससे

बीमा कंपनियों और अस्पतालों को लाभ होता है।

सिजेरियन डिलीवरी का खर्च सामान्य डिलीवरी से 2-5 गुना अधिक होता है, जिससे अस्पतालों को अधिक मुनाफा होता है। नार्मल डिलीवरी में घंटों का समय लग सकता है, जबकि सीजेरियन एक तय समय में पूरा किया जा सकता है, जिससे अस्पतालों और डॉक्टरों को कम समय में अधिक संख्या में डिलीवरी कराने का मौका मिलता है।

कई बार मरीजों को डराकर यह बताया जाता है कि बच्चा खतरे में है, जिससे वे सिजेरियन के लिए मजबूर हो जाती हैं। यह नैतिक रूप से गलत है। कुछ डॉक्टर निजी अस्पतालों में अपनी सुविधा के अनुसार डिलीवरी शेड्यूल करना पसंद करते हैं। इसके अलावा कुछ महिलाओं को लेबर पेन का इतना डर होता है कि वे खुद सिजेरियन करवाने के लिए तैयार हो जाती हैं।

जागरूकता बढ़ानाः महिलाओं को इस बारे में जागरूक किया जाए कि नार्मल डिलीवरी अधिक लाभदायक होती है।

डॉक्टरों की जिम्मेदारीः डॉक्टर्स को केवल जरूरत पड़ने पर ही सिजेरियन करना चाहिए।

प्राकृतिक तरीकों को बढ़ावाः गर्भावस्था के दौरान योग और सही डाइट अपनाकर नार्मल डिलीवरी को प्रोत्साहित किया जाए।

सरकारी निगरानीः सरकार को सख्ती से नियम लागू करने चाहिए, ताकि अनावश्यक सिजेरियन कम हों।

पारदर्शिताः अस्पतालों में सिजेरियन और नार्मल डिलीवरी की दरें स-ार्वजनिक की जानी चाहिए।

दूसरी राय लेनाः महिलाओं को सिजेरियन की सिफारिश मिलने पर दूसरे डॉक्टर से सलाह लेने की आदत डालनी चाहिए।

नवभारती सेवा न्यास ने मनाया वार्षिकोत्सव

नवभारती सेवा न्यास एवं बाबू जगजीवन राम संसदीय अध्ययन एवं राजनीतिक शोध संस्थान, पटना बिहार के संयुक्त तत्वावधान में 'हिंदी गजलः एक दिवसीय कार्यशाला' तथा कवि सम्मेलन का आयोजन जगजीवन राम शोध संस्थान के सभागार में धूमधाम से मनाया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि बिहार विधान परिषद के उपसभापति डॉ. राम वचन राय, थे। उद्घाटन पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति प्रो. गणेश महतो ने किया। कार्यक्रम का विधिवत उद्घाटन विशिष्ट अतिथि भगवती प्रसाद द्विवेदी, आर. पी. घायल, डॉ. इंद्र नारायण सिंह, प्रेम किरण, प्रीति सुमन, नेहा भारती, संजीव कुमार सिंह, अशोक श्रीवास्तव आदि ने दीप प्रज्वलित करके किया।

कार्यशाला के प्रशिक्षक डॉ. इंद्र नारायण सिंह ने पचास युवाओं को हिंदी गजल की विस्तृत जानकारी प्रदान कर कविता के विकास में योगदान दिया। इस अवसर पर राइजिंग हार्ट एकेडमी के बच्चों को आत्मरक्षा प्रशिक्षण के लिए सम्मानित किया गया।

प्रतिकुलपति प्रो. गणेश महतो ने कहा कि यह कार्यक्रम साहित्य से जुड़े युवाओं के लिए दिशा और दशा बदलने वाला होगा।

प्रवीण कुमार चुन्नू ने कवि सम्मेलन का संचालन किया। काव्यपाठ करने वाले कुछ महत्वपूर्ण कवि अभिलाषा सिंह, सागरिका रॉय, नमिता लोहानी, रवि सिंह पार्थ, सिद्धेश्वर कश्यप, जीतांशु अंजन, अभिमन्यु प्रजापति, इंदु शेखर, शालिनी सिंह, मिथिलेश आनंद, अमरजीत कुमार, प्रीति सिन्हा, कुणाल कुमार, गुड़िया तिवारी, अमरनाथ सिंह, विवेक कुमार गुप्ता, आस्था कुमारी, आरती कुमारी, एकता कुमारी, शिल्पी कुमारी, कन्हैया कुमार, सीमा कुमारी, गार्गी मिश्रा, सोनिया अनंत, अनु कुमारी, काजल, आराध्य, विजय समस्त, मितांशु अंजन, पवन कुमार आदि शामिल थे।

ब्यूरो रिपोर्ट दूसरा मत

गांधी के स्वयं सेवा के अनिवार्य तत्व पर सात दिवसीय शिविर में चर्चा

हिन्दू कॉलेज में र सात दिवसीय विशेष शिविर के अंतर्गत गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के सौजन्य से स्वयं सेवा की सामाजिक उपादेयता पर कार्यशाला का आयोजन हुआ। कार्यशाला में समिति के प्रशासनिक अधिकारी संजीत कुमार ने प्रतिभागियों को संबोधित कर भारत में राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान स्वयं सेवा के योगदान और गांधी जी के जीवन पर विस्तृत व्याख्यान दिया। संजीत कुमार ने गांधी जी की संपूर्ण जीवन यात्रा पर प्रकाश डालते हुए कहा कि ऐसे महापुरुष समूचे संसार में दुर्लभ हैं जिनका जीवन ही उनका सच्चा संदेश बनकर हमारा पथ प्रदर्शित करता है। संजीत कुमार ने स्वयं सेवा से जुड़े अपने अनेक संस्मरण साझा करते हुए बताया कि एक स्वयं सेवक का आवाज लगाना ही समाज सेवा की शुरूआत का पहला कदम है। उन्होंने स्त्री सशक्तीकरण, अस्पृश्यता उन्मूलन और स्वच्छता के संबंध में गांधी के दर्शन की व्याख्या करते हुए स्वयं सेवा के प्रसंग में इनका महत्व प्रतिपादित किया।

कार्यशाला में समिति के शोध अधिकारी डॉ सौरव राय ने कहा कि गांधी ने स्वयं सेवा का अभ्यास दक्षिण अफ्रीका प्रवास के दौरान बोअर युद्ध तथा उसके बाद फीनिक्स आश्रम में किया। राष्ट्रीय सेवा योजना के कार्यक्रम अधिकारी डॉ पल्लव ने कहा कि छोटे और गैर महत्वपूर्ण समझे जाने वाले कार्यों में भी स्वयं सेवा की आवश्यकता होती है, जिनके माध्यम से बड़े सेवा कार्यों तक पहुंचा जा सकता है। कार्यशाला का संयोजन कर रहे गांधी अध्येता राजदीप पाठक ने गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के उद्देश्यों तथा इतिहास की जानकारी दी।

व्याख्यानों के बाद संवाद सत्र में शौर्य, ईशान, आदित्य, निशिता और अनन्या के सवालों के उत्तर वक्ताओं ने दिए। सत्र का नेतृत्व राष्ट्रीय सेवा योजना के स्वयं सेवकों अनन्या और कोरल ने किया। इससे पहले समिति प्रांगण में पहुंचने पर वेदाभ्यास कुंडू एवं अन्य साथियों ने स्वयं सेवकों का स्वागत किया।

कार्यशाला के दूसरे भाग में स्वयं सेवकों ने समिति प्रांगण में गांधी चित्र प्रदर्शनी तथा परिसर का अवलोकन किया। अंत में समिति के सहयोगी विवेक ने आभार प्रदर्शित किया।

दिल्ली विश्वविद्यालय,के हिन्दू कॉलेज राष्ट्रीय सेवा योजना की सचिव आयुषी के मुताबिक सात दिवसीय शिविर के अंतर्गत प्रतिदिन व्याख्यान को पीरामल फाउंडेशन के सहयोग से गांधी फैलोशिप के संबंध में आयोजित कार्यशाला में दिव्या जैन, तनवीर खारा और अक्सा जैदी ने स्वयं सेवकों को संबोधित किया। इस आयोजन में महाविद्यालय की संस्था दिशा का भी सहयोग रहा।

ब्यूरो रिपोर्ट दूसरा मत

डॉ घनश्याम बादल
वरिष्ठ पत्रकार एवं स्तंभकार

किधर जा रही है हिंदी कविता?

21 मार्च को विश्व कविता दिवस मनाया गया। जहां तक देवनागरी हिंदी की बात है, इसमें तो गद्य से अधिक कविताएं अधिक लोकप्रिय रही है क्योंकि कविता के माध्यम से कई सामाजिक परिप्रेक्ष्य में कम शब्दों में अधिक और गहरी बात कहने में सक्षम होता है लेकिन आजहिंदी कविता आज एक महत्वपूर्ण बदलाव के दौर से गुजर रही है। पारंपरिक छंदबद्ध कविताओं की बजाय आज की कविता मुक्त छंद, प्रयोगधर्मी और व्यक्तिगत अनुभवों ज्यादा जुड़ गई है।

और इसमें समष्टि के बजाय व्यष्टि के प्रधानता काफी बढ़ गई है यानी सामाजिक राष्ट्रीय एवं वैश्विक मुद्दों के बजे यह व्यक्तिगत अधिक होती जा रही है।

समकालीन हिंदी कविता पर दृष्टि डालें तो इसमें उत्थान एवं पतन दोनों के ही लक्षण स्पष्ट दिखाई देते हैं।

आज की हिंदी कविता में अच्छी बात यह है आई है कि विषयवस्तु में विविधता बढ़ी है। समसामयिक मुद्दे जैसे पर्यावरण संकट, नारीवाद, दलित विमर्श, सामाजिक असमानता, और राजनीतिक चेतना कविता का प्रमुख हिस्सा बन चुके हैं। आज कविता में नए माध्यमों का उपयोग हो रहा है । झ सोशल मीडिया, ब्लॉग, और ऑनलाइन पत्रिकाओं ने कविता के प्रचार-प्रसार को व्यापक बनाया है वहीं युवा कवियों का योगदान भी बढ़ रहा है। नई पीढ़ी के कवि अधिक स्वच्छंदता और खुले विचारों के साथ और सशक्त अभिव्यक्ति के साथ अपनी रचनाएं प्रस्तुत कर रहे हैं।

एक अच्छी बात यह भी है कि अब सूक्ष्म एवं क्लिष्ट शब्दावली के बजाय

आंचलिकता और लोकभाषाओं का समावेशहिंदी कविता में अब क्षेत्रीय भाषाओं और बोलियों का प्रयोग भी बढ़ा रहा है।

अब सवाल उठता है कि वर्तमान हिंदी कविता किस दिशा में जा रही है

वर्तमान हिंदी कविता में प्रयोगधर्मिता निरंतर बढ़ रही हैपारंपरिक काव्य संरचनाओं को तोड़ते हुए नई शैलियों और भाषा प्रयोगों को अपनाया जा रहा है। सामाजिक और राजनीतिक चेतना, सामाजिक न्याय, स्त्रीवाद, जातिवाद, और मानवाधिकार जैसे मुद्दे हिंदी कविता में प्रमुख विषयों के रूप से उभर रहे हैं।

अन्य क्षेत्रों की तरह अब कविता भी केवल कॉपी कलम किताब तक सीमित नहीं है अपितु आज का युग डिजिटल कविता का युग बनकर आया है-इंस्टाग्राम, फेसबुक और यूट्यूब जैसे प्लेटफार्म पर कविताएँ प्रकाशित और प्रस्तुत की जा रही हैं, जिससे नई शैली की डिजिटल कविता का विकास हो रहा है। और पारंपरिक कवियों के बजाय नए कई नई दृष्टि के साथ सामने आ रहे हैं।

इतना ही नहीं सीमित मात्रा में ही सहीझ आधुनिक कविताएं ऐतिहासिक संदर्भों और लोककथाओं को भी नए परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत कर रही हैं।

इस दृष्टि से देखने पर तो हिंदी कविता का भविष्य उज्ज्वल प्रतीत होता है, क्योंकि यह समय के साथ बदल रही है और नए नए आयाम अपना रही है। भविष्य की हिंदी कविता में आर्टिफिशियल

इंटेलिजेंस और कविता- एआई और मशीन लर्निंग के जरिए कविता नए प्रयोग हो सकते हैं। और इंटरएक्टिव और मल्टीमीडिया कविता- ऑडियो-विजुअल माध्यमों के साथ कविताएँ अधिक जीवंत हो सकती हैं। वैश्विक मंच पर भी हिंदी कविता झ अनुवाद और डिजिटल मीडिया के माध्यम से हिंदी कविता और अधिक प्रसार का सकती है। स्थानीय बोलियों और लोकभाषाओं के समावेश से हिंदी कविता में देशज भाषाओं का प्रभाव और बढ़ सकता है।

लेकिन यह कविता का केवल एक उजला पक्ष है प्रश्न उत्थान पतन के दौर में हिंदी कविता ने में बहुत सी विद्रूपताएं भी समाहित हो गई हैं जिन्होंने हिंदी कविता के सम्मुख संकट खड़ा कर दिया है।

आज की हिंदी कविता के सामने कई महत्वपूर्ण संकट हैं, जो इसके अस्तित्व और प्रभाव को प्रभावित कर रहे हैं।

आज के डिजिटल युग में लोगों की रुचि साहित्यिक पुस्तकों और कविताओं की बजाय सोशल मीडिया, वेब सीरीज और फिल्मों में अधिक हो गई है। कविता पढ़ने और समझने की परंपरा कमजोर होती जा रही है। ।और प्रकाशन जगत में भी गुणवत्ता की बजाय मुनाफे को प्राथमिकता दी जा रही है, जिससे साहित्यिक और गंभीर कविताओं के बजाय हल्की-फुल्की, लोकप्रिय शैली की कविताओं को अधिक महत्व दिया जा रहा है। इससे गहरी और प्रभावशाली कविता के विकास में बाधा आ रही है।

नई पीढ़ी में हिंदी भाषा के प्रति आकर्षण कम हो रहा है। अंग्रेजी और हिंग्लिश के बढ़ते प्रभाव के कारण शुद्ध हिंदी कविता लिखने और पढ़ने वालों की संख्या घट रही है। इसके अलावा, नई कविता की जटिलता और अमूर्तन के कारण भी सामान्य पाठक इससे दूर होता जा रहा है।

सोशल मीडिया के दौर में त्वरित अभिव्यक्ति का चलन बढ़ा है, जिससे गहरी संवेदनाओं और कलात्मक शिल्प वाली कविता के बजाय तात्कालिक, सतही और साधारण अभिव्यक्तियां अधिक सामने आ रही हैं। इंस्टाग्राम और ट्विटर पर छोटी-छोटी कविताएं तो लोकप्रिय हो रही हैं, लेकिन गहरी, विचा-रोत्तेजक और सामाजिक रूप से प्रासंगिक कविताएँ पाठकों तक कम पहुंच पा रही हैं।

आज की हिंदी कविता में वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद, पर्यावरण संकट, सामाजिक असमानता, जातिवाद और स्त्री-विमर्श जैसे कई महत्वपूर्ण विषय उभरकर आए हैं। इन पर प्रभावशाली कविता लिखना एक चुनौती बन गया है, क्योंकि यह विषय गहन अध्ययन और संवेदनशीलता की मांग करते हैं। जहां आभासी मंचों के माध्यम से कविता का विस्तार हुआ है वही दर्शकों के सम्मुख सीधे कविता पढ़ने की कला के पोषक कवि सम्मेलन आज अलग ही दिशा में जाते दिखाई दे रहे हैं। काव्य मंचों का व्यवसायीकरण होने से गंभीर कवियों की बजाय मनोरंजन प्रधान कवियों को अधिक स्थान मिल रहा है। हास्य-व्यंग्य प्रधान कविताएं ज्यादा सुनी जाती हैं, जिससे गहरी और अर्थपूर्ण कविताएं हाशिए पर चली गई हैं। इस क्षेत्र में गले बाजी एवं गुटबाजी तथा मंचों पर द्विअर्थी एवं अश्लील कविताएं तथा चुटकुले हिंदी कविता की गरिमा को बहुत ठेस पहुंचाई है। हालांकि हिंदी कविता के सम्मुख कई संकट हैं, फिर भी यह पूरी तरह समाप्त नहीं होने वाली है । नए माध्यमों और डिजिटल प्लेटफॉर्म्स के माध्यम से कविता नए पाठकों तक पहुंच रही है। जरूरत इस बात की है कि कविता को वर्तमान संदर्भों में अधिक प्रासंगिक, प्रभावी और संप्रेषणीय बनाया जाए, ताकि यह अपनी महत्ता बनाए रखे और समाज को नई व सार्थक दिशा देने में सहायक हो सके।

(लेखक वरिष्ठ हिंदी कवि एवं समीक्षक हैं)

तेज नारायण राय की दो कविताएं

▸▸ तेज नारायण
कवि/साहित्यकार

पतंग की डोर

बचपन में पतंग उड़ाते
जब कट जाती थी पतंग की डोर
और जा गिरती थी
गांव की सीमा से दूर
किसी पेड़ की फुंनगी पर

तब पतंग के पीछे
दोस्तों के साथ दौड़ लगाते
हमें पता नहीं था कि
जिंदगी भी एक पतंग है
जो कभी आशा और उम्मीद के आसमान में उड़ती है ऊंचाई पर
तो कभी यथार्थ की जमीन पर
आ गिरती है नीचे

और कभी-कभी तो ऐसा होता है
ना ऊपर उड़ पाती है
ना तो नीचे ही गिरती है बल्कि
किसी बिजली के खंभे की तार से लटक कर झूलती रहती है

अब जबकि बचपन की पतंग
छूट गई है बहुत पीछे
स्कूल के बाहर किसी पेड़ पर
लटक रही होगी कहीं
या फिर किसी बिजली के खंभे में झूल रही होगी पता नहीं

लेकिन कैसे बताऊं कि आज
उसकी डोर जीवन में
उलझन बनकर उलझ गई है

कभी-कभी सोचता हूं कि
ये जो दौलत की डोर से बंधी
महत्वाकांक्षा की पतंग
उड़ने वाले दौलतमंद लोग हैं

एक दूसरे की पतंग काटने की होड़ में लगे ठहाका लगाते हुए

उन्हें पता है भी की नहीं कि
उनके जीवन की पतंग की डोर भी
बंधी है किसी एक ऐसे अदृश्य हाथों में जो कभी भी समेट सकती है
उसकी डोर

और महत्वाकांक्षा के आसमान में
ऊंचाई पर उड़ने वाली पतंग भी अचानक कट कर गिर सकती है
नीचे शायद उन्हें पता है भी की नहीं !

सावधान रहो ऐसे लोगों से

ग़लती करने वाला व्यक्ति
नहीं मानेगा कभी अपनी ग़लती

अपनी ग़लती को सही साबित करता तुमको ही ठहरा देगा ग़लत !

तुमको नीचा दिखाने
ख़ुद गिर जाएगा इतना नीचे
जिसकी कल्पना भी नहीं कर सकते तुम कभी

ऐसे लोग बिना वजह बहस करते हैं
और जब तब उलझ जाते हैं किसी से

तर्क कम कुतर्क ज़्यादा करते हैं ऐसे लोग
इसलिए ऐसे लोगों से बहस मत करना कभी मेरे दोस्त!
मत करना कभी बहस !

ऐसे लोगों की दुनिया
कुएं के मेंढक की तरह होती है
'अधजल गगरी छलकत जात'
जैसी लोकोक्तियां भी
शायद ऐसे ही लोगों से बनी होगी

ऐसे लोग कभी किसी से हार नहीं मानते
न ही मांगते हैं कभी किसी से क्षमा
इसलिए क्षमा के योग्य भी नहीं होते कभी ऐसे लोग

ऐसे लोगों से क्षमा मांगकर भी
दिल से क्षमा मत करना
कभी ऐसे लोगों को
मत करना कभी क्षमा

हो सके तो सचेत रहना
सावधान रहना ऐसे लोगों से
मेरे दोस्त !
कि ऐसे लोग कभी किसी के नहीं होते
न अपनों के न अपने आप के

ऐसे लोग गलत होकर भी सही होते हैं
और सही होकर भी ग़लत

पहचान सको तो पहचानो
अपने आसपास ऐसे लोगों को
और सदा सचेत रहो,
सावधान रहो
कि ऐसे लोग कभी किसी के नहीं होते
कभी किसी के नहीं होते!

दुमका झारखंड

अजय महताब की कविता मज़दूर

(1)

जो चीरते हैं सीना
धरती का
जो तोड़ते हैं घमंड
पहाड़ों के
जो शिक्षा और स्वास्थ्य के
व्यापारियों को
मुहैया कराते हैं
व्यापार कर सकने लायक़ मंडियां
जिनके हाथ औज़ारों के बिना
औज़ार जिनके हाथों के बिना
अधूरे हैं
क्या दी जा सकती है
कोई निश्चित परिभाषा उनकी ?
गिरे तो फटे तरबूज़-सा

बस तरबूज़-सा ही है शायद
उनका वजूद
मगर
इसी वजूद के बग़ैर

कितनी मुश्किल है
कल्पना निर्माण की ।

(2)

जब सूरज
अपनी पूरी ताक़त से
चाहता है जला डालना
सड़कें, जंगल, वादियां
और इंसान
तब पंखे और ए.सी.के नीचे
कुछ दिमाग़
संघर्ष कर रहे होते हैं
बचाने को अपना परिवार
जब हवा चाहती है
बदल डालना सबकुछ
रेशमी कोकून या
हिमालय में
तब नए-पुराने
गर्म कपड़ों में

लिपटे
अपना वजूद
समेटे-सिकोड़े
आदम के कई सांचे
उलझ रहे होते हैं
कंप्यूटर और फाइलों से
खोदते हुए पैबस्त जड़ें
मालिक के आदेशों की

वहीं देवी सरस्वती के कुछ दूत
लू,कोहरे और पाले को
ताक पर रख
गढ़ रहे होते हैं
मिट्टी के कुंभ
बिना चोट के
क्योंकि
चोट करना अब
नहीं उनके अधिकार में
चोट खाना ही अब क़िस्मत है उनकी

दुनिया के किसी भी किताब,शास्त्र

या शिलालेख में
नहीं लिखा गया इन्हें चाकर
ना ही मज़दूर
क़िस्मत के इतने खोटे
नहीं रख पाते ख़ुद को
श्रम के किसी श्रेणी में
आसमान कभी-कभी
धरती की इस रीत पर
ढेरों आंसू रोता है
कभी बरसाता है अपना ग़ुस्सा
जैसे बहा लेना चाहता हो
दुनिया की हर वो किताब
जो पढ़े-लिखे ग़ुलामों को
नहीं देती उनकी पहचान
पढ़े-लिखों की होती है
अलग पहचान
तभी तो
नहीं भिगोते देह
आसमानी आंसुओं से
कर लेते सुरक्षित ख़ुद को
बरसाती के सुरक्षा कवच से

रुककर समय बर्बाद करने से
बेहतर होता है
समय पर ऑफ़िस पहुंचना ।

(3)
हर एक आदेश के पालन के बाद
मिल्खा सिंह की रफ़्तार से
भागता हुआ आ जाता है
अगला आदेश
हर बार
पहले से कम
समय के साथ

तय नहीं हो पाता कि
हर बार
बढ़ जाता है
मालिक का विश्वास
आदेशपाल पर
या हर आदेश
किसी प्रतियोगिता

का प्रतिभागी होता है

हर बार
भागने लगते हैं क़दम
दौड़ने लगता है दिमाग़
जाग जाती है लगन
पहले से कई गुना

मालिक के चेहरे की संतुष्टि
होंठों की मुस्कुराहट
और वफ़ादारी का सिला
दो शब्द 'बहुत अच्छा'
सुनने की ख़ातिर

हर बार आदेश का वज़्न
बढ़ जाता है कई गुना
बिना कांधों की क्षमता
जांचे-परखे
बिना कुछ पूछे,

वैसे भी कहां पूछता है कोई
काटने से पहले जंगल की ख़्वाहिश
खोदने से पहले

भला कोई पूछता है ज़मीन से !

तुम खुदना चाहती हो या नहीं
मनचाहा बोझ लाद दिया जाता है
बिना पूछे ही धरती के सीने पर
मशीनों, बिल्डिंग्स और लाखों -करोड़ों
लोगों का बोझ

धरती कभी किसी को
नहीं करती इंकार
कुर्सी के मातहत
काम करने वाला आदेशपाल
उसके हाथ,पैर,मुंह और दिमाग़
भी तो नहीं कर सकते इंकार

पहली हां से ही
आदेशपाल
बन जाता है ज़मीन का वो टुकड़ा
जिस पर मनचाहा बोझ डालने का अधिकार
होता है मालिक को

धीरे-धीरे
बोझ ढोते-ढोते वह टुकड़ा
बन जाती है धरती ।●

जमशेदपुर, झारखंड

प्रतिमा (मूर्ति) की पूजा

डॉ एस के पांडेय
वरिष्ठ स्तंभकार

सनातनी प्रतिमा (मूर्ति) की पूजा करते हैं और उसमें उन्हें ईश्वर के दर्शन होते हैं। कई लोगों के मन में यह विचार आता है कि ईश्वर तो निर्गुण और निराकार है फिर मूर्ति बनाकर उसे पूजने का औचित्य क्या है ?इस पर दुनिया के

अलग-अलग धर्मों / मज़हबों में भांति-भांति के मत-मतांतर मिलते हैं ।सनातनी हिंदू परंपरा में भी निर्गुण ब्रह्म और सगुण ब्रह्म पर व्यापक रूप से चिंतन-मनन किया गया है। परंतु, सामान्य मानव बुद्धि से यदि विचार करें तो एक बात समझ में आती है कि ईश्वर का ध्यान करना चाहें, जब सब तरफ से थक जाएं और मदद मांगने के लिए ईश्वर को पुकारना चाहें तो निराकार को कैसे पुकारे ? उद्धव के निर्गुण उपदेशों को सुनकर विकल गोपियों ने ठीक ही कहा था, -

'निराधार मन चकृत खावैह्वअर्थात् बिना आधार के मन उद्विग्न हो जाता है , यदि कोई आधार दे दे तो वहां मन टिक जाता है। 'शुक्र नीति सार' में मूर्ति देखने और उससे एकमेक होने के लिए ध्यान की बात कही गई है। मंदिर में मूर्ति का बाह्य स्वरूप ही कहां होता है ! वहां दैवीय स्वरूप होता है जिसे ध्यान से साधा जाता है ।भारत में इसीलिए सगुण धारा के कवियों / आचार्यों की जनमानस में अधिक पैठ बढ़ी और उनकी स्वीकार्यता भी बढ़ी,जैसे- तुलसी, सूर,मीरा, नरसी मेहता,रामानुजाचार्य, रामानन्दाचार्य आदि ।ईश्वर के निर्गुण स्वरूप के उपासक उद्धव जी जब गोपियों को श्रीकृष्ण से विमुख करने के लिए गोकुल गए तथा ईश्वर के निर्गुण निराकार स्वरूप का बखान करने लगे तो गोपियों ने बहुत ही मार्मिक परंतु महत्वपूर्ण बात कहीं -

'उधौ मन नाहि दस- बीस,
एक तो रह्यो सो गयो स्याम संग,
को आराधै ईश ।'

गोपियों के मुख से यह सुनकर महान ज्ञानी उद्धव जी गोपियों के समक्ष निरुत्तर हो गए तथा सगुण प्रेम में सरोबार होकर श्रीकृष्ण के पास पहुंचे थे। भारत में प्रतिमा पूजा के पीछे छिपी धारणा को 'अथर्ववेद' के इस श्लोक में देखा जा सकता है- 'एहि अश्मानमातिष्ठ अश्मा भवतु ते तनु।' अर्थातं हे भगवन ! आओ, इस पाषाण निर्मित प्रतिमा (मूर्ति) में अधिष्ठान करो, तुम्हारा शरीर यह पाषाणमयी प्रतिमा हो जाए।' सामवेद के 36 वें ब्राह्मण में लिखा है-

'देवतायतनानि कम्पन्ते दैवत प्रतिमा हसन्ति रुदन्ति ,नृत्यंति,स्फुटन्ति , स्विद्यन्त्युन्मीलन्ति निमीलन्ति।' अर्थात् देवताओं के स्थान कांपते हैं ,देव प्रतिमा हंसती हैं,रोती हैं नाचती हैं, किसी अंग से स्फुटित हो जाती हैं,पसीजती हैं,,नेत्र खोलती हैं,बंद करती हैं । भरत मुनि ने अपने नाट्य शास्त्र में इसके लिए बहुत सुंदर शब्द प्रयुक्त किया है 'स्व प्रतिष्ठ' अर्थात् किसी विग्रह में प्राण प्रतिष्ठा के बाद स्वयं उस स्वरूप का साक्षात विद्यमान हो जाना ही मूर्ति है और सनातनी उसी की पूजा- अर्चना ,ध्यान और

अलग-अलग देवी-देवताओं के आवाहन, प्राण-प्रतिष्ठा आदि के लिए मंत्र तथा अन्य विधियां भी अलग होती हैं। अस्थायी तौर पर निर्मित मूर्तियों के विसर्जन के लिए भी मंत्रों का विधान है परंतु स्थायी रूप से मंदिरों में स्थापित मूर्तियों के विसर्जन नहीं किए जाते। जिस तरह से प्रस्तर, काष्ठ,धातु, मिट्टी आदि की प्रतिमाओं में प्राण प्रतिष्ठा करके मंत्र विधान के द्वारा ईश्वरीय स्वरूप प्रदान करने की विधि है वैसे ही जीवित मनुष्य को भी प्रस्तर मूर्ति बनाकर उसमें देवत्व का अंश स्थापित करके आराधना करने की भी परंपरा है।

आराधना करते हैं । देव प्रतिमाएं कितनी शक्तिशाली होती हैं , इस संबंध में स्वामी विवेकानंद जी से जुड़ा एक प्रसंग यहां उद्धृत करना समीचीन होगा , 'एक बार विवेकानंद जी को पैसों की

दिक़्क़त थी , तब उन्होंने अपने गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी से यह बात बताई । परमहंस जी महाराज ने कहा कि यह कौन सी बड़ी बात है, उन्होंने मां की मूर्ति की तरफ संकेत किया कि जाओ अंदर मां से मांग लो। वह अंदर

गए, मां के पास बैठे और बाहर चले आए, तीन बार मां के सामने गर्भगृह में बैठे और जब-जब बाहर आए तों परमहंस महाराज ने पूछा कि धन- संपत्ति मां से मांगी तो विवेकानंद जी ने कहा कि गुरुदेव अंदर जाकर मां का स्वरूप देखने के बाद तो कुछ याद ही नहीं रहता ।स्वामी परमहंस जी प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा कि तुम परीक्षा में सफल हुए।

''श्रीमद्भगवद्गीता ह्य में भक्ति के माहात्म्य का महत्व बताते हुए भगवान श्री कृष्ण ने स्वयं कहा है- 'न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानैर्न च क्रियाभिर्न तपोभिरुग्रैः।

एवं रूपःशक्य अहं नृलोके द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर।।(अध्याय 11, श्लोक 48) अर्थात् मेरे इस विश्वरूप का दर्शन उत्कृष्ट भक्ति के कारण केवल तुम्हीं कर सकते हो क्योंकि मेरे इस स्वरूप का दर्शन वेदों के अध्ययन, यज्ञों के करने,दान देने,उग्र तप करने से भी नहीं हो सकता। (संक्षिप्त अर्थ)

Commentary:

"It should not be misunderstood that Vedic study, Yajnas and other rites and rituals prescribed in the Shastras are all useless. Without devotion to the Lord, these acts do not yield the highest results.Austerity by itself cannot lead to God realisation without devotion (Bhakti).Whatever may be the efforts unless the field is watered, there is no harvest.So also the works of men bear no fruit without devotion."

हमारे शास्त्रों में प्राण प्रतिष्ठा के लिए अलग से मंत्रों का विधान है , कुछ मंत्र तो समान हैं तो कुछ मंत्र अलग- अलग देवी- देवताओं के लिए अलग-अलग होते हैं। सनातनी लोगों द्वारा मिट्टी के शिवलिंग बनाकर प्रतिमा पूजन करने की

प्रथा है ।कुछ लोग वर्ष पर्यंत हाथ पर मिट्टी का शिव लिंग बनाकर भगवान शिव की पूजा आराधना करते हैं तो कुछ केवल पवित्र सावन के महीने में ही मिट्टी का शिवलिंग बनाकर पूजन करते हैं ।मिट्टी के लिंग की प्राण प्रतिष्ठा के

लिए निम्नलिखित मंत्रों के उच्चारण का विधान है ;

'ॐब्रह्माविष्णुरुद्र ऋषिभ्यो नमः, शिरसि ।ॐ ऋग्यजुः सामच्छन्दोभ्यो नमः, मुखे।ॐप्राणाख्यदेवतायै नमः, हृदि। ॐआँ बीजाय नमः, गुह्ये। ॐह्रींशक्त्यै नमः, पादयोः।ॐक्रौं कीलकाय नमः, सर्वांगेषु ।इस प्रकार से मंत्रों का न्यास करके प्राण प्रतिष्ठा के लिए पुनः निम्नलिखित मंत्रों का उच्चारण करते हुए लिंग का स्पर्श करने का विधान है :

ॐ आँ ह्रीं क्रौं यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ सः सोऽहं शिवस्य प्राणाःइह प्राणाः ।

ॐ आँ ह्रीं क्रौं यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ सः सोऽहं शिवस्य जीव इह स्थितः ।

ॐ आँ ह्रीं क्रौं यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ सः सोऽहं शिवस्य सर्वेन्द्रियाणि वांगमनस्त्वक्चक्षुः श्रोत्रघ्राणजिह्वापाणिपादपायूपस्थानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।इसके बाद आवाहन, करन्यास, षडंगन्यास आदि कराने के बाद आसन, पाद्य,अर्घ्य,मधुपर्क, स्नान आदि मंत्रोच्चार के साथ किए जाते हैं।

अलग-अलग देवी-देवताओं के आवाहन, प्राण-प्रतिष्ठा आदि के लिए मंत्र तथा अन्य विधियां भी अलग होती हैं। अस्थायी तौर पर निर्मित मूर्तियों के विसर्जन के लिए भी मंत्रों का विधान है परंतु स्थायी रूप से मंदिरों में स्थापित मूर्तियों के विसर्जन नहीं किए जाते।जिस तरह से प्रस्तर, काष्ठ,धातु, मिट्टी आदि की प्रतिमाओं में प्राण प्रतिष्ठा करके मंत्र विधान के द्वारा ईश्वरीय स्वरूप प्रदान करने की विधि है वैसे ही जीवित मनुष्य को भी प्रस्तर मूर्ति बनाकर उसमें देवत्व का अंश स्थापित करके आराधना करने की भी परंपरा है। इन पंक्तियों के लेखक को काशी के विश्वनाथ कॉरिडोर के बगल में स्थित राज राजेश्वरी मठ में स्थापित'राज राजेश्वरी' देवी की मूर्ति के दर्शन का सौभाग्य मिला है।ऐसी मान्यता है कि इस मठ में आज भी कई योगी ,सिद्ध और तांत्रिक संत निवास करते हैं। इस मूर्ति के बारे में मान्यता है कि कई सौ साल पहले कोई निःसंतान राजा इस मठ में संतान प्राप्ति की इच्छा से आए थे और उन्होंने इस मठ के सिद्ध महात्मा से पुत्र प्राप्ति की याचना की। महात्मा जी ने प्रसन्न होकर उन्हें संतान प्राप्ति का आशीर्वाद दिया और साथ में यह शर्त भी रखी कि वे पहली संतान को मठ को समर्पित करेंगे ।राजा को पहली संतान लड़की हुई और जब वह कन्या विवाह योग्य हुई तो उसे लेकर राजा अपनी पत्नी सहित इस मठ में आए। महात्मा जी का दर्शन किए और अपनी पुत्री को महात्मा जी को अर्पित कर दिया ।ऐसी मान्यता है कि सिद्ध योगी महात्मा जी ने उस कन्या को दीवार में खड़ा करके उसे प्रस्तर प्रतिमा के रूप में स्थापित कर दिया और वही प्रतिमा आज राज राजेश्वरी देवी के रूप में पूजी जाती हैं ।यह मूर्ति काफी जागृत है तथा भक्तगण शक्तिपीठ के रूप में इस मूर्ति की पूजा-अर्चना करते हैं। भारत में इस तरह के कुछ और भी मंदिर हैं जिनमें स्थापित विग्रहों की बड़ी श्रद्धा और विश्वास के साथ पूजा -अर्चना की जाती है ।

यह सब प्रमाण यह बताने के लिए पर्याप्त है कि जब प्रतिमा (मूर्ति) में वैदिक प्रक्रियाओं से परमात्मा की शक्तियों को आकर्षित करके उसमें प्राण स्थापित कर दिया जाता है, तो वह केवल मिट्टी, पत्थर, लकड़ी या धातु आदि की मूर्ति नहीं रह जाती, अपितु वह विग्रह (प्रतिमा/ मूर्ति) ईश्वर का साक्षात स्वरूप हो जाता है।

(ये लेखक का व्यक्तिगत दृष्टिकोण है)
बेंगलूरु -560076

तस्मै श्री प्रदूषणे नमः

अशोक गौतम, *वरिष्ठ व्यंग्यकार*

तो जनाब ! बहुत कुछों के होने के बीच हुआ यों कि मैं दिल्ली का मूल निवासी

दिलवाला मतवाला, फ्रेश, ऑर्गेनिक के नाम पर पता नहीं क्या क्या खाने वाला,

कल पता नहीं कहां से आई मुट्ठी भर शुद्ध हवा में सांस लेने की ग़लती करने

पर पर मर गया। मेरे पास स्वर्ग का टिकट तो था नहीं, सो नरक में जा पहुंचा।

सरकार से मरने के बाद एक अनुरोध है कि कोटों के कोट की जेबों में कोटे पर कोटा ठूंसते मुझ जैसे जीवों को स्वर्ग जाने का कोटा, कोटे से निर्धारित करे ताकि ईमानदार जीव भी गली-सड़ी सब्ज़ियों का स्वाद चखने दे, बाद में स्वर्ग का स्वाद चख सकें।

तो जनाब ! मैं मरा तो अकेला ही यमराज के दरबार में जा पहुंचा। वैसे दरबार मेरी ज़िंदगी की अहम हिस्सा रहे हैं। या यों कहूं कि मैं पैदा होने से लेकर मरने तक दरबारी जीव रहा हूं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। अपने को घोषित सुविधाएं मांगने के लिए कभी वार्ड मेंबर के दरबार, तो कभी मोहल्ला प्रधान के दरबार ! अपने को घोषित सुविधाएं मांगने के लिए कभी नगर परिषद के इस अफ़सर के दरबार तो कभी उस अफ़सर के दरबार ! अपने को घोषित सुविधाएं मांगने के लिए कभी एमएल के दरबा,र तो कभी मंत्री जी के दरबार। मैं जब तक जिदा रहा, दरबार-दरबार शीश नवाता रहा। कभी अफ़सर के दरबार में तो कभी ईश्वर के दरबार में।

पर जिस समय में अफसर ही ईश्वर हो जाएं उस समय में मेरे जैसों की सुने

कौन ? अब मरने के बाद भी देखिए यमराज के दरबार में हाज़िर हूं !

मैं यमराज के दरबार में पहुंच उनके सामने प्रस्तुत हुआ तो वे मुझे ख़ुद ही

आया देख कर चौंके, तो मैं उन्हें देखकर। असल में उन्होंने मेरे मरने के बाद मुझे पहली बार देखा था, तो मैंने अपने मरने के बाद पहली बार लाइव उन्हें। हां ! तस्वीरों और फ़िल्मों में उन्हें बहुत बार देखा था। पर आदमियों की बनाई उनकी तस्वीरों से वे भगवान की तरह कतई मैच नहीं कर रहे थे। मुझे देख उन्होंने पूछा, ‘ हे जीव ! कहां से आ रहे हो ?’

‘जनाब दिल्ली से !’ लाख परेशानियों में भी मैंने हंसने की आदत सी बना ली थी सो मुझसे गंभीर विषय पर भी न जाने क्यों मुस्कुराया गया।

‘दिल्ली से ?’

‘जी हूजूर ! दिल्ली वालों के क्या दूसरे यमराज हैं ?’

‘हे जीव ! प्रदूषण के अनुरूप अपने को ढालने के बाद भी तुम आख़िर मरे तो मरे कैसे ? दिल्ली के प्रदूषण को देखकर तो अब मेरे यमदूत ाी किसी जीव को वहां से लाने से डरते हैं। मैं जिस जीव को दिल्ली से लाने के लिए जिस यमदूत की ड्यूटी लगाता हूं, वह कोई न कोई बहाना बनाकर अवकाश पर चला जाता है। यार ! खैर

अपने लिए तो छोड़ो ! पर दूसरों के लिए इस प्रदूषण को लेकर तुम सेंसेटिव क्यों नहीं होते ?’

‘ होते तो हैं महाराज ! प्रदूषण मुक्त दिल्ली बनाने के लिए नारों से दिल्ली की

दीवारें लोडिड नहीं, ओवर लोडिड कर दी हैं हमने महाराज ! हर सरकार दिल्ली के प्रदूषण मुक्त नारे को लेकर आती है और नारों में दिल्ली का प्रदूषण ख़त्म करने के बहाने अपना प्रदूषण खत्म कर चली जाती है,‘ कहते डरा भी कि मुझे कहीं देशद्रोही घोषित न कर दिया जाए ! मरने दो ! मरने के बाद जो चाहे घोषित करते रहें। ज़िंदा जी तो लाख मेहनतें करने के बाद भी अघोषित मध्यमवर्गीय ही रहा। कअब भी समझते क्यों नहीं ? नारों से नहीं, विचारों से समाज में परिवर्तन आता है,’कह वे गुस्साए।

‘ महाराज ! विचार आज हैं कहां ?’

‘तो तुम मरे कैसे ? कोई विचारक हो ?’

‘नहीं महाराज ! पता नहीं कहां से शुद्ध हवा का कण आकर मेरे नाक में घुसा और मैं मर गया महराज ! ’

‘मतलब ?’

‘महाराज ! जिस जीव को आठों पहर दूषित हवा में सांस लेने की आदत पड़ जाए, जिस जीव को पैदा होते ही घूंट घूंट दूषित पानी पीकर प्यास बुझाने की आदत पड़ जाए, उसे जो ग़लती से शुद्ध खाने पीने को मिल जाए तो वह मरेगा नहीं तो क्या अमरत्व को प्राप्त होगा ?’

मैंने कहा तो पता नहीं क्या सोचते क्यों वे वहां से उठ पता नहीं कहां चले गए ? ●

रिटायरमेंट के बाद फुर्सत में हास्य?

दिनेश गंगराड़े
वरिष्ठ व्यंग्यकार

टाइम पास, सफ़र पास की तरह होती है सेवा निवृत्ति, इसका टेम काटना बड़ा हेडेक होता है। आम लोग कैसे करते हैं? एक रिटायर्ड मनख ने जवाब में मैंने कहा कि आपको कल का ही एक उदाहरण दे के समझाता हूं उससे समझ लेना,रिटायर्ड मेन ठेठ फुरसत में रहता है।

एक सेवानिवृत्त ज्वेलरी के भव्य शो रूम से अपनी पत्नी के साथ पांच मिनट में बाहर, निकलकर सड़क पर आ गए। बाहर आकर देखा तो ये क्या? शोरूम के बाहर चालान की रसीद बुक लिए कार के पास ट्रैफिक पुलिस का साठ वर्षीय 'जवान' खड़ा था। रिटायर्ड,हम घबरा गए और उससे कहा, भाई अभी मुश्किल से पांच मिनट ही हुआ था अंदर गए, इस बार जाने दो प्लीज!

पुलिस का जवान अकड़कर बोला,- सभी ऐसे ही बोलते हैं, पर जब हज़ार रुपए जेब से लगेगा, तब समझ आएगा कि पेनल्टी क्या होती है? फाइन भरना रिटायर्ड पर्सन को बहुत अखरता है। उन्होंने अपनी विवशता बताई। मैं रिटायर्ड हूं और मेरे सफेद बाल की तो शर्म रखो,मानवता के नाते कुछ तो रहम करो,बुजुर्गों के ऊपर कुछ तो इंसानियत धरो?

पहले तो वो सक्रिय जवान नहीं माना। लेकिन फिर वो बोला,- लाखों की गाड़ी में घूमते हो, और ज्वेलरी पर गोल्ड ख़रीदते हो फिर भी हज़ार रुपए के लिए चिकचिक करते हो। अर्थदंड पर नाड़ी खिंचाती फिरती है। पैसों के भुगतान करने पर लोगों की अतड़ियां बाहर निकल जाती है। आपकी उम्र का लिहाज़ करता हूं। सेवानिवृत्त पर्सन हो तो चलो दो सौ रुपये ही दे दो, बग़ैर रसीद के? मैंने पूछा इस दो सौ रुपये की रसीद तो देना पड़ेगी,तभी राशि मिलेगी? उसने मना किया। और कहा कि यदि क़ायदे से करना है तो हज़ार रुपए ही लगेगा।

मैंने दलील दी कि रसीद तो देनी पड़ेगी ना। बिना रसीद कैसे चलेगा? और फिर मैंने बहुत दलीलें दी तो वह बेहद गुस्सा होकर बोला, -बहुत क़ायदे की बात करते हो, तो लो मैं अब क़ायदा समझाता हूं। एक मिरर टूटा हुआ है,पीछे की नंबर प्लेट भी टूटी हुई है।आपके पास पीयूसी भी नहीं है। अब तो अर्थदंड चार हज़ार रुपए होगा। अगर

ड्रायविंग लाइसेंस जेब में नही है, तो उसके हज़ार रुपए अलग से भरना पड़ेंगे। ज़्यादा सानपत्ति बताए, तो लो भरो अब! रिटायर्ड ने अपनी बूढ़ी पत्नी को कहा कि तू समझा इस पुलिस वाले को। वैसे पुलिस जवान कोई का, बाप की भी नी सुनें। फिर उनके साथ आधा घंटे तक चकचक चर्चा भी चली। भोत देर तक कांदा का छिलका हेड़ता रया। नरी भचभच हुई। थोड़ी भोत कचकच भी हुई। इस तरह तीस से चालीस मिनट निकल गए। अब पुलिस वाला अपनी वाली पर आ गया। और रसीद बस काटने ही वाला था कि इतनी देर में तो सिटी बस आ गई।और हम खड़ूस दंपति खट्ट दनी से सिटी बस में चढ़ी गया। पुलिसिया अपने मूल अंदाज़ में चिल्लाया। तब हमने हंसते हुए कहा कि भाई साब,वास्तव में वह कार हमारी नहीं है। हम रिटायर्ड होकर टेम पास कर रहे थे। हम तो ये बक कर,बस में चढ़ गए,और भन्नाया हुआ

पुलिस वाला बेचारा हमे देखता रह गया।

अब ऐसे तो हज़ार तरीक़े है रिटायरमेंट में टेम काटने के। बोलो टाइम पास हुआ कि नहीं ?मेरे बोंदर काका,रिटायर्ड जज थे। वे अपने घर से जब 'काय्या' हो जाते तो समय काटने को किराना दुकान पर चले जाते> और सौ ग्राम मैथी दाने तुलवा कर उन दानों की संख्या गिनने बैठते? कभी यार लोगों को अपने जजमेंट की स्टोरी सुनाते रहते। सैकड़ो क़ायदे गिना देते,क़ानून में लपेट देते? एक गमना सर है। चालीस साल नौकरी बजाई। अब पत्नी सरकार का हुकुम, सेवानिवृत्त हो, बजा रहे हैं। ख़ुद ने पूरक परीक्षा देकर डिग्री हासिल की। अब छात्रों को निहाल करते रहे हैं?अब इंटरव्यू में दी गई चार-चार अंकसूचियों के क़िस्से सुनाते रहते है? एक रिटायर्ड बैंक में लोगों के फार्म भरते। ख़ुद के खाते से आहरण करते। दूसरे दिन जमा कर, फ़ुर्सत का टेम काटते है। समारोहों में नए बच्चों के धंधे-पानी की खुफिया जानकारी प्राप्त कर, व्यस्त रहते। अपने विभाग का अनुभव बांट कर दूसरों के मग़ज़ पर घन(भारी हथौड़ा) मारते रहते हैं। कोई-कोई अख़बारों की पुरस्कार प्रतियोगिता में बिजी रहकर विजेता बनने की फ़िराक़ में खोए रहते हैं। मेरा एक सेवानिवृत्त दोस्त मरने के बाद होने वाले फायदे गिनाकर बीमा कंपनी में अपनी फुरसत काट रहे हैं। एक भाई साब,दैनिक अख़बार दिनभर शहद लगाकर चाटते रहते हैं। और अपना समय बिताते हैं।एक साब,निवृति के बाद ज्योतिषाचार्य बन कर लोगों के राहु केतु तलाशते फिरते है। ●

निपानिया, इंदौर452010मप्र

वीरेन्द्र नारायण झा की कविताएं

क़ानून का पक्षक

क़ानून का जिसे समझा था रक्षक
वही निकला आज उसका भक्षक
जिद मंदिर में था एक मुख्य द्वार
निकला है अब उसमें कई पक्षक।

पेचीदगी

हमको सब पता है
जानते हैं ख़ूब आप
क़ानून की पेचीदगियों को
हम नहीं जानते
क़ानून का ककहरा भी
इसलिए जब-तब
ढीला कर देते आप
पेच क़ानून का।

ऐसी-तैसी

बंधी है पट्टी आंखों पर
क़ानून की देवी की
इसलिए तो कर देते वे
ऐसी-तैसी क़ानून की।

आपसे सीखे

किसी चीज़ को
तोड़-मरोड़ कर पेश करना
कोई आपसे सीखे
पढ़ी है आपने मोटी-मोटी
किताबें क़ानून की
सच को झूठ और
झूठ को सच करना
कोई आपसे सीखे। ●

झंझारपुर-मधुबनी, बिहार

वीरेन्द्र नारायण झा
वरिष्ठ व्यंग्यकार

गौरीशंकर दुबे
वरिष्ठ व्यंग्यकार

ज़माना स्मार्टफोन का

आज का युग स्मार्ट युग है। आज के समय की हर चीज़ स्मार्ट है। स्मार्ट शहर स्मार्ट स्कूल, स्मार्ट बच्चे, स्मार्ट माता-पिता, स्मार्ट फोन, स्मार्ट घर, सड़कें, स्मार्ट गली-कूचे, नदी-तालाब सब स्मार्ट हैं। आज हर कोई स्मार्ट बनकर घूम रहा है। स्मार्टनेस नहीं तो सबके जेब में स्मार्ट फोन है। अपना फोन निकाल कर स्मार्टनेस दिखाते हैं। फिर बच्चे क्यों पीछे रहे। एक समय था जब महिलाएं मोबाइल पकड़कर नाच गा रही थी। स्मार्ट युग है, यह न्यायालय ने भी कह दिया है। अब हमें मानना ही पड़ेगा कि आज का युग स्मार्ट युग है। बच्चे भी स्कूल ले जा सकते हैं, भले ही स्कूलों में उसे उपयोग न करने दिया जाए। जैसे परीक्षा के समय सबका मोबाइल, कैलकुलेटर जमा करवा कर परीक्षा हाल में प्रवेश दिया जाता है। वैसे ही कार्यालय में जमा करवा कर क्लास रूम में प्रविष्ट होने दिया जाएगा। अच्छा है कम से कम स्कूल में उपयोग नहीं कर सकेंगे।

स्मार्ट फोन कोरोना काल (लॉकडाउन) में आनलाइन क्लास के समय बच्चे क्लास से जुड़ने के लिए उपयोग करते थे। घर बैठे क्लास में सम्मिलित होने के लिए यह आवश्यक था। अपने माता-पिता किसी का भी मोबाइल उपयोग कर लेते था। जब स्कूल में उसका उपयोग नहीं कर सकते हैं। जो बच्चे उस समय भी मोबाइल लेकर स्कूल आते थे। दो में से एक भाई दूसरे की शिकायत करता था- यह गेम खेलता है। तकनीक से बच्चो को दूर नहीं करना चाहिए। मोबाइल का भरपूर इस्तेमाल करने देना चाहिए। अध्ययन की बारीकियों को समझाने का अवसर मिलेगा। स्मार्ट फोन से यदि लाभ है, तो उससे बच्चों का नुक़सान भी है। बचपन से उपयोग करने से आंखें प्रभावित हो सकती हैं। ●

अफ़सरनामा

डॉ. मुकेश असीमित
वरिष्ठ व्यंग्यकार

अफ़सर नाम का प्राणी वह है, जो दफ़्तरों में पाया जाता है। वैसे तो सरकारी, अर्ध-सरकारी, और गैर-सरकारी सभी दफ़्तरों में यह पाया जाता है। कुछ अर्जित, कुछ जबरन, कुछ जुगाड़ू, और कुछ कबाड़ी- हर प्रकार के

अफ़सर होते हैं। अफ़सर काम नहीं करते, काम की चिंता करते हैं। गधे की तरह ज़िम्मेदारियों का बोझ ढोते हैं-जिम्मेदारी काम करवाने की और साथ में काम की चिंता का बोझ उठाने की।

इनका कोई समय नहीं होता; ये समय और स्थान से परे, ब्रह्मस्वरूप होते हैं। ये ऑफ़िस के कण-कण और जड़-चेतन में विराजमान रहते हैं। इसलिए कुर्सी पर दिख सकते हैं, नहीं भी दिख सकते हैं, या दिखते हुए भी नहीं दिख सकते हैं। और नहीं दिखते हुए भी दिख सकते हैं।

अफ़सर को कभी भी नौकर मत समझिए। इनके चाल-ढाल और रंग-ढंग सब अलग और जुदा-जुदा होते हैं। ये तो सारी जनता को अपना नौकर समझते हैं। नौकर के साथ चाकर जुड़ा होता है, लेकिन अफसर के साथ क्लब, विदेशी दौरे, महंगी शराब, और अनगिनत मीटिंग्स जुड़ी होती हैं।

अफ़सर का मुख्य भोजन रिश्वत है। ये सवार्हारी होते हैं। वैसे तो रिश्वत में विविधता की परवाह नहीं करते, जो भी मिले खा सकते हैं। कुर्सी, टेबल, फाइल, पेन, पेंसिल, कूड़ा-कचरा, यहां तक कि सड़कें और पुल तक निगल

सकते हैं। इनका पेट बहुत बड़ा होता है। इनके जूते भी बड़े आकार के होते हैं, जो हर समय इनके अधीनस्थ कर्मचारियों पर चलते रहते हैं। ये जूते कभी थकते नहीं, कभी रुकते नहीं। ये सोचते बहुत हैं-दफ़्तर के बारे में, काम के बारे में। सोचते-सोचते इन्हें अक्सर झपकी लेनी पड़ती है। बिना झपकी के, इनके ख़्याल बेलगाम हो जाते हैं। पलकों में ख्यालों को बंद कर लेते हैं और फिर ख़्यालों की 'वोमिट' करने के लिए मीटिंग बुलाते हैं। दफ़्तरों में, फाइलों के ढेर के पीछे, आपको ये अक्सर झपकी लेते हुए मिलेंगे।

इनका मुख्य काम मीटिंग करना है। हर समस्या का हल मीटिंग ही होती है। किसी भी काम को टालने का, और कोई उपाय न हो तो मीटिंग; न करने का कोई और बहाना न हो तो मीटिंग। ये कोई भी काम अपने कंधे पर नहीं लेते और क्रेडिट से कोसों दूर रहते हैं। किसी भी निर्णय से पहले ये मीटिंग ज़रूर करते हैं, ताकि किसी भी असफलता का ठीकरा दूसरों के माथे पर फोड़ा जा सके। अगर मीटिंग से समय मिले तो ये दौरे पर निकल जाते हैं। दौरे कई प्रकार के होते हैं, जो ज़्यादातर मौसम के अनुसार तय किए जाते हैं। गर्मी हो तो किसी ठंडे स्थान पर और सर्दी हो तो किसी गर्म स्थान पर।

इनको ऑटोग्राफ़ देने का कोई शौक नहीं होता; फाइलों में इनके ऑटोग्राफ़ मांगे जाते हैं। ये शान से कहते हैं, जैसे दीवार फ़िल्म में अमिताभ बच्चन ने कहा था–

'जाओ, पहले उसके ऑटोग्राफ़ लाओ, फिर उसके, फिर उसके... तब मेरे पास आना तुम... आख़िर में मेरे ऑटोग्राफ !'

बड़े अफ़सर बड़े दौरे पर होते हैं, कभी-कभी विदेश तक चले जाते हैं। सेमिनार, जिमखाना, डाक बंगला और रेस्ट हाउस में इन्हें बहुतायत से देखा जा सकता है। अफ़सर को सबसे ज़्यादा डर यूनियन वालों से लगता है। इन्हें मालूम है कि इनसे बड़ा अफ़सर इनका तबादला कराए न कराए, यूनियन का अध्यक्ष ज़रूर करवा सकता है। डर इस क़दर है कि अगर यूनियन अध्यक्ष की सलामी का भी जवाब नहीं दिया, तो इन्हें डर है कि यूनियन हड़ताल पर जा सकती है।

हर अफ़सर के ऊपर एक अफसर होता है, जो उसे हड़काता है। यह इस हड़कन को अपने पास नहीं रखते, तुरंत निर्लिप्त भाव से नीचे वाले को ट्रांसफर कर देते हैं। नीचे वाला बाबू को, और बाबू उसे अपनी जेब में रखकर हाथों से मसल देता है, जैसे चींटी को मसल रहा हो। हर अफ़सर के ऊपर एक जासूस होता है, और वो इसकी बीवी के सिवा कोई दूसरा नहीं होता। और हर अफ़सर के नीचे दो-चार जासूस होते हैं, जो दिन भर ऑफ़िस की सभी जायज़-नाजायज़ गतिविधियों की गंध इन्हें सूंघाते

रहते हैं।

अफ़सर को घर जेल लगता है और दफ़्तर एक पिकनिक स्पॉट। अफसर के दफ्तर में घड़ी भी अफ़सर के हिसाब से चलती है। सर्दियों में धूप में

मूंगफली खाते हुए दिखेंगे, और गर्मियों में ए.सी. की ठंडी हवा खाते हुए। अफसर

जहां होता है, वहीं दफ्तर लग जाता है, बिल्कुल शहंशाह की तरह। जब तनाव होता है, तो मीटिंग होती है। मूड फ्रेश हो, तो मीटिंग होती है। कुछ नहीं हो रहा हो, तब एक मीटिंग तो जरूर आयोजित करनी होती है, सिर्फ़ इसलिए कि पता करें कि आज कुछ क्यों नहीं हो रहा दफ़्तर में।

बाबू से पूछते रहते हैं, 'अच्छा, बताओ, आज मैं कैसा लग रहा हूं?'बाबू कहते हैं, 'साहब जी, इस बात पर तो एक मीटिंग आयोजित कर ली जाए। सबकी सर्वसम्मति से पता भी लग जाएगा कि आप कैसे लग रहे हैं। अब मैं

अकेला कहूंगा, जनाब, तो छोटे मुँह बड़ी बात होगी।'

बस, इसी बात पर एक मीटिंग आयोजित करनी पड़ती है। अफ़सर की नई टाई की प्रशंसा के लिए भी एक मीटिंग आयोजित की जाती है। नीचे ओहदे वाले दफ़्तर में किसी कर्मचारी की ख़ुशी बांटने को पार्टी करते हैं, तो अफ़सर उस ख़ुशी को काफ़ूर करने के लिए मीटिंग करते हैं।

अफ़सर होना मतलब कुर्सी और उस पर टंगा उनका कोट। कोट के अंदर अफ़सर का होना ज़रूरी नहीं है। जैसे भरत ने अयोध्या का राज्य चलाने के लिए राम जी की खड़ाऊँ ली थी, वैसे ही इनका कोट दफ़्तर का राज्य चलाता है। इससे बढ़िया रामराज्य आपको देखने को नहीं मिलेगा।

ये कहीं भी जाएं, अपना कोट कुर्सी पर टांग देना नहीं भूलते। अगर बड़ा अफ़सर भी आ जाए, तो कोट देखकर कोई भी कह सकता है कि 'अफसर तो हैं, लेकिन किसी ऑफि] शियल काम से इधर-उधर गए होंगे।' इसी बीच,

अफ़सर हो सकता है अपनी नई स्टेनो को पास के बंगले में टाइपिंग सिखाने में व्यस्त हो। काम तो दफ़्तर का ही हो रहा है ना! ●

गौरव गुप्ता की कविता माटी

आया है सावन
भीगा है आंगन
खेतों में पानी
नाना और नानी

नानी ने बोला
राज ये खोला
ये जो है माटी
सोना उगाती

सच है ये नाना?
कुछ ना छुपाना
सच-सच बताना
इसमें खजाना?

हां मेरे नाती
नानी सुनाती
सच है कहानी
तुमको बतानी

नानी की पेटी
छूने न देती
उसमें है सोना
हरगिज़ ना खोना

बातें बनाते
ये ना बताते
सोना जो आया
कैसे उगाया?
धान उगाया
मंडी में लाया
बेचा कमाया
पैसा बनाया

गए सराफा
पहन के साफ़ा
साफे को खोला
जल्दी से बोला

ओ मेरे भाई
लो ये कमाई
दो तोला सोना
मेरे को दो ना

ये तेरी नानी
बड़ी सयानी
पानी पिलाई
सोना छिपाई

बंद है तब से
पेटी में इसके
अपना ये सोना
इसको ना खोना
पर मेरे नाना
बात बताना
धान जो आया
कैसे उगाया?

पौधा उगाया
बीज से आया
पौधे को रोपा
माटी को सौंपा
बस एक बात
थोड़ी सी खाद
ख़ूब-सा पानी
संग में हो नानी
जाने दो सावन
भरने दो आंगन
आने दो कुआर
फसल तैयार
पानी ना बरसे
नानी तब हरसे
ट्रैक्टर चलेगा
धान कटेगा

ये थी कहानी
तुमने जो जानी
खेती किसानी
अपनी निशानी

हां नाना-नानी
मैंने अब जानी
ये जो है माटी
सोना उगाती ●

विजय नगर, जबलपुर

फ़र्श से अर्श पर

लेखक-परिचय :

नाम - गीता चौबे 'गूँज'
जन्म स्थान - बिक्रमगंज, रोहतास (बिहार)
निवास स्थान - राँची, झारखंड
संप्रति - बेंगलूरु
शिक्षा : स्नातकोत्तर
जन्मदिन - 11 अक्टूबर, 1967

अब तक दस प्रकाशित पुस्तकें प्र-काशित
त्रैमासिक पत्रिका आदित्य संस्कृति में गीता चौबे गूँज विशेषांक प्रकाशित

दो लघुकथाओं - 'तलाश' एवं 'वसुधा का दर्द' पर लघु फिल्मों का निर्माण

सामाजिक सरोकार की एक लघु फिल्म 'हैंडसम दूल्हा' में अभिनय करने का अवसर प्राप्त हुआ।

संपादन - छांदसिक साझा-संकलन 'काव्य गुंजना'
लघु कहानियों का संग्रह 'आखिरी पन्ना' (लेखिका - पुष्पा पांडेय)
कविता-संग्रह 'सुनो न! मन की' (लेखिका - पुष्पा सहाय गिन्नी)

30 से ऊपर साझा संकलन

हिन्दी के साथ-साथ भोजपुरी में भी कविता, कहानी, आलेख, लघुकथा एवं छंद बद्ध रचनाओं का लेखन
रेखाचित्र बनाने का शौक

कुछ प्रमुख सम्मान -
1 .दुष्यंत कुमार स्मृति सम्मान 2023
2. झारखंड का प्रतिष्ठित स्पेनिन साहित्य गौरव सम्मान 2024 के साथ कई अन्य सम्मान

गीता चौबे 'गूंज'
वरिष्ठ कथाकार

''चने ले लो... चटपटे... मसालेदार!
नए स्वाद से मिले जिह्वा को उपहार!''

ट्रेन के स्लीपर क्लास में चने वाला अपनी चटपटी आवाज़ में चने बेचने की कला का उम्दा प्रदर्शन कर रहा था। उसकी मसालेदार बातों का प्रभाव इतना था कि हाथोंहाथ उसके सारे चने बिक जाते थे। क़रीब हर स्टेशन पर गाड़ी के रुकते ही तरह-तरह के सामानों की बिक्री के सिलसिले यूं ही जारी रहते! आजीविका के लिए सभी अपने-अपने तरीके से प्रयास करते और उसी हिसाब से उनकी कमाई भी होती।

ट्रेन में नियमित सफ़र करने वालों के लिए यह आम बात होती है। कभी कोई अपनी सुरीली आवाज में गाने सुनाकर, कभी रोचक खेल दिख-ाकर... किसी न किसी रूप में धन-उपार्जन का ज़रिया बनाते हैं।

मैं उस ट्रेन की एक नियमित यात्री थी और अक्सर इस तरह की घटनाओं की साक्षी रहा करती। कभी-कभार बिना जरूरत भी सामान ख़रीद लिया करती थी, मदद करने की मंशा के बहाने।

एक बार ट्रेन में सफ़र के दौरान एक 20 - 25 साल का एक युवक फटेहाल अवस्था में भीख मांगने आया। उसकी स्थिति पर तरस खाकर सबने कुछ न कुछ दिया। उसी डिब्बे में एक व्यापारी भी बैठा था, जिसने कुछ देर पहले ही मुझसे बातचीत के दौरान कहा था कि उसका फूलों का व्यवसाय है, जिसके माल की सप्लाई के लिए अक्सर उसका दूसरे शहरों में आना-जाना लगा रहता है।

कुछ पाने की आशा में वह भिखारी उस व्यवसायी के पास भी गया। उस व्यवसायी ने उससे कुछ सवाल किए, ''मैं तुम्हें मुफ़्त में कुछ भी क्यों दूं?

इससे मेरा क्या फायदा होगा? भिखारी को कुछ उत्तर देते नहीं बना। आगे उसने कहा, ''देखो! मैं एक व्यापारी हूं और मेरे व्यवसाय का एक उसूल है कि किसी को कुछ दो तो बदले में उससे भी कुछ लो।''

फिर उस व्यवसायी ने उससे एक और सवाल पूछा, ''अच्छा ठीक है, मैं भी तुम्हें कुछ दूंगा, पर उसके बदले में तुम मुझे क्या दोगे?''

''अपन के पास देने को है ही क्या...?'' भिखारी मायूस हो बोल उठा।

''कुछ भी, एक फूल भी दे सकते हो। इस तरह हाथ फैलाते हुए तुम्हें शर्म नहीं आती? गांधी जी भी कहा करते थे कि बिना श्रम के अगर कोई रोटी खाता है, तो वह सबसे बड़ा चोर है...।''

''यह भी तो एक कामे न है साहब? एक बोगी से दूसरे बोगी घूम-घूमकर पैसे मांगना। इसमें भी मेहनत तो ख़ूबे लगती है। पैर भी पिराते रहता है। इसके अलावा तो कोई काम अपन को आता ही नहीं ''... भिखारी की आंखों में कहीं कोई शर्म नहीं थी।

''अरे तुम एक नवयुवक हो, मेहनत कर के अपना पेट तो पाल ही सकते हो। इस तरह भीख मांगना शोभा देता है क्या ?''

व्यापारी की बात पर पहले तो वह रोने लगा फिर एक यात्री ने उसे चुप कराकर कुछ खाने को दिया। और अपने बारे में बताने को कहा। यात्रियों को भी समय काटना था, सबने उत्सुकता दिखाई। खाते-खाते ही उस भिखारी ने अपनी रामकहानी सुनानी शुरू की।

जब अपन ने होश संभाला ख़ुद को एक खोली में पाया, जहां और भी 5-6 बच्चे रहते थे। खोली का मालिक सबको किसी दूसरे शहर में रेलवे स्टेशन पर छोड़ देता और डिब्बों में जा-जाकर भीख मांगने को कहता। शाम को सबको वापस खोली ले आता। दिनभर वह कहां रहता किसी को नहीं पता रहता। इसे ही काम समझ कर सब करते रहे। जिसके बदले में मालिक सबको खाना देता। कुछ समय बाद मालिक ने सिखाया कि किसी का पर्स या पैसे सीट पर रखा दिखे, तो उसे भी उठा लेना। अपन इसे भी करते गए। एक दिन किसी ने सीट पर से पर्स उठाते हुए अपन का हाथ पकड़ लिया। दो-चार थप्पड़ भी मारे और कहा कि चोरी करते शर्म नहीं आई!

अपन को समझ ही नहीं आया कि क्यों मारा। ग़ुस्से में चिल्ला कर बोला,

'सीट पर रखा हुआ था उठा लिया, चोरी कैसे हुआ?'

फिर तो लात-घूंसों की बौछार होने लगी। तब जाकर अच्छी तरह समझ में आया कि चोरी किसको कहते हैं और चोरी करने से कितनी मार पड़ती है! उसके बाद कभी कहीं पड़ी कोई चीज] को हाथ नहीं लगाया। हां मांगने पर कुछ मिले न मिले पर मार कभी नहीं खाया। अब तो आदत हो गया। दुत्कार पर भी फर्क नहीं पड़ता। मालिक की मौत के बाद भी अपन को यही काम आसान लगता है'... इतना कहकर भिखारी चुप हो गया।

व्यापारी धैर्य से उसकी बात सुनता रहा, फिर बड़ ही नम्र स्वर में कहा,

'' तुम इस देश की युवा शक्ति हो। जब इस शक्ति को ही घुन लग जाए तो हमारा देश कैसे तरक्की करेगा! इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं। तुम्हारी परवरिश ही ऐसी हुई है, जहां इससे अधिक की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। खैर छोड़ो!

यह बताओ कि तुम्हें पेट भरने के लिए किसी की दुत्कार नहीं सहनी पड़े तो मेरा बताया काम करोगे?''

भिखारी के साथ-साथ सभी यात्री भी उस व्यापारी को हैरत से देखने लगे।

भिखारी ने कहा, ककक्यों नहीं साहब अपन को पेट भरने के लिए जो

काम मिलेगा करेगा। तत

''तो फिर ठीक है, कल से इसी ट्रेन में लोगों को एक - एक गुलाब के फूल दिया करो, बदले में जो भी मिले उसे सहर्ष स्वीकार करो... फिर देखो तुम्हारी स्थिति कैसे बदलती है ! तुम चलो मेरे साथ, मैं तुम्हें कुछ गुलाब के फूल दूंगा... बदले में तुम मेहनत करने का पक्का आश्वासन दो मुझे ; क्योंकि मुफ्त में तो मैं कुछ दूंगा नहीं।''

डिब्बे में सारे लोगों ने इस बात पर जोरदार तालियां बजाकर उस व्यवसायी की बातों का अनुमोदन किया। मैं भी उनलोगों में शामिल थी।

अगली बार जब मैं ट्रेन में गई तो उस भिखारी, जिसने अपना नाम सुरेश बताया था, को गुलाब के फूलों के कुछ गुच्छों के साथ देखा। उसने सभी को एक - एक गुलाब दिए... बदले में हम सबने भी उसे पैसे दिए। इस तरह वो अब कभी फूल तो कभी फूलों का गुलदस्ता लिए नज़र आता...। उसके सारे फूल बिक जाते। उसका हौसला बढ़ने लगा।

धीरे-धीरे उसके फूलों की खुशबू बढ़ने लगी। एक बार सुरेश (भिखा-री) ट्रेन में आया और उसने खुशी से सबको बताया कि उसने फूलों की एक छोटी सी दुकान खोली है। उस डिब्बे में सभी नियमित यात्री होते थे, जो सुरेश के इस ख़ुशबूदार सफर के साक्षी भी थे...। सुरेश को भी इनसे आत्मीयता हो गई थी। सभी ने उसे शुभकामनाएं दीं।

सुरेश की दूकान ताज़े फूलों की ख़ुशबू से महकती रहती। साथ ही सुरेश के अंदर आत्मविश्वास का एक कोमल अंकुर फूट पड़ा जो धीरे-धीरे मज़बूत विशाल पेड़ में परिवर्तित होने लगा।

फूलों की ख़रीद- बिक्री करते रहने से उसे फूलों के क़िस्मों और उससे संबंधित बहुत-सी बातों की जानकारी भी हासिल होने लगी। बढ़ती आमदनी से उसने एक छोटा-सा प्लॉट लिया, जहां एक झोपड़ी बना के रहने लगा। आगे थोड़ी सी ज़मीन थी। वहां उसने कुछ फूलों के बीज लगा दिए। बहारों के मौसम के साथ साथ उसके जीवन में भी बहारें आनी शुरू हो गईं।

फिर तो उसने पीछे मुड़कर नहीं देखा। दिन दूनी, रात चौगुनी तरक़्क़ी करता गया। उसके फूलों की ख़ुशबू देश के साथ साथ विदेशों में भी फैलने लगी। उसकी गिनती फूलों के एक सफल व्यवसायी के रूप में होने लगी।

काफ़ी समय बीत गया था। अब सुरेश को सभी भूल से गए थे ; क्योंकि

सभी अपने-अपने जीवन के एक नए पड़ाव पर ठहराव के साथ व्यस्त हो गए थे। ट्रेन में आने जाने का सिलसिला समय के साथ समाप्त हो गया था।

एक दिन एक समाचार पत्र में एक आलेख जिसका शीर्षक था- 'फ़र्श से अर्श पर' में एक फूल व्यवसायी का इंटरव्यू छपा था तस्वीर के साथ। मुझे वह तस्वीर कुछ जानी-पहचानी लगी। दिमाग़ पर ज़ोर दिया तो वे सारी घटनाएं एक-एक कर याद आ गईं।

उस इंटरव्यू में सुरेश के साथ-साथ उस व्यवसायी की तस्वीर भी थी, जिसने सुरेश को प्रेरित किया था।

मैंने उत्साहपूर्वक पूरा आलेख पढ़ा, जिसमें सुरेश को फूलों की उत्कृष्ट जानकारी और एक सफल व्यवसायी के रूप में अवार्ड दिया गया था। और सुरेश ने इसका पूरा श्रेय उस व्यवसायी को देते हुए कहा था, '' मुझे ' फर्श से अर्श '' पर पंहुचाने में इन महोदय का पूरा हाथ है। आज मैं जो कुछ भी हूं, इन्हीं की बदौलत हूं, इसलिए मैं यह अवार्ड इनको समर्पित करता हूं। ''

इस आलेख को पढ़कर मेरी आंखें उन दोनों के सम्मान में श्रद्धा से झुक गईं। और मैं सोचने लगी कि कहां एक वैसा भिखारी जिसकी बातचीत के टोन में भी आवारगी का पुट था और कहां एक सभ्य-सुसंस्कृत भाषा में उसका साक्षात्कार। यदि प्रेरणा देनेवाला और प्रेरणा लेनेवाला दोनों इनके जैसे हों तो भिक्षावृत्ति, जो अब स्वयं में एक अघोषित व्यवसाय बन गयी है, का जड़ से ख़ात्मा हो जाए!

इस तरह जीवन से हताश और निराश व्यक्ति भी आसमान की बुलंदियों को छूकर दूसरों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन जाते हैं।

●बेंगलूरु

दूसरा मत

पढ़ें और पढ़ाएं

एक शुभचिंतक

नई दिल्ली

प्रेम की पोटली

अमृता पांडे
वरिष्ठ कथाकार

कृतियां - सिसकती सांकलें, सांझ का सूरज, मन का भंवर

उस नई कॉलोनी में मैंने साढ़े चार हज़ार स्क्वायर फीट का प्लॉट लेकर आधे हिस्से में निर्माण करा लिया था। और आधे हिस्से को लॉन के रूप में सजाया था। नई-नई कॉलोनी कटी थी। शहर से कुछ दूर ज़रूर थी, पर सड़क चौड़ी थी। और रेट अपेक्षाकृत कुछ कम। पुत्र मोह से वशीभूत होकर इतना बड़ा प्लॉट मैंने पति से ज़िद करके इसलिए ख़रीद लिया था कि आधे-आधे में दोनों बेटे आराम से घर बना सकते हैं। बड़े वाले से बात करके उसके हिस्से में मकान बना कर हम रहने लगे थे। हमारे आसपास के कुछ और प्लाट भी बिक गए थे, लेकिन चूंकि यह जगह अभी ज़्यादा विकसित नहीं हुई थी, इसलिए शायद लोगों ने घर बनाने का इरादा अभी त्याग रखा था। ख़ैर, हमें तो ज़रूरत थी। शादी के कुछ साल किराए के मकान में, उसके बाद एक छोटे से फ़्लैट में कट गए थे। अब समय के साथ-साथ जब हाथ में पैसा आया, तो वह छोटा फ़्लैट अपनी हैसियत से कम लगने लगा। अपने पहाड़ वाले घर को बेचकर यह प्लाट ले लिया था। हालांकि बेटा अच्छा कमा रहा था, लेकिन इस घर को बनाने में या प्लॉट ख़रीदने में हमने उससे एक पैसा भी नहीं लिया। मैंने और पति ने मिलकर इसमें पैसा लगाया। बहुत सुंदर घर बन पड़ा था।

आजकल के आर्किटेक्ट कमाल करते हैं। छोटी-छोटी जगह में बड़े अच्छे शानदार कमरे निकाल देते हैं, जिसमें वॉशरूम के साथ अटैच्ड ड्रेसिंग रूम भी होगा। बरामदा, हर कमरे से अटैच्ड बालकनी सब कुछ। ख़ैर हमारी तो जगह भी ज़्यादा थी, तो परिणाम भी बेहतरीन मिला। छोटे बेटे ने कह दिया था कि लॉन में कुछ फलदार पौधे भी लगा लें। चूंकि प्लॉट उसी के नाम पर था, तो उसकी बात माननी ही थी और हमें ख़ुद भी यह विचार अच्छा लगा।

शुरूआत के दिन बड़े आराम से कटने लगे थे। इसी बीच हमारे एरिया से लगभग एक किलोमीटर दूर भी प्लाटिंग हुई, जहां पर पहले खेती हुआ करती थी। मैदान से आया एक परिवार बहुत समय से वहां पर रहकर साजी के तौर पर खेती करता था। प्लॉट ख़रीदने वालों ने एक मत होकर इस परिवार को वहां से हटाने की बात कही, क्योंकि अनपढ़ परिवार, रहन-सहन का तौर तरीक़ा बिल्कुल अलग। परिवार में बच्चों की संख्या ज़्यादा और साफ़ सफ़ाई का अभाव। जहां-तहां गंदगी पड़ी रहती। खेती के साथ-साथ इन्होंने जानवर भी पाले थे। गोबर की बदबू अलग। बरसात में तो हाल बेहाल हो जाता था। बिल्डर को ख़रीदारों से अच्छा पैसा मिल रहा था, इसलिए उसने साजीदार को वहां से हटाने में ही अपनी भलाई समझी। अभी भी खेती का रकबा काफ़ी ज़्यादा था इसलिए इन लोगों को कहीं न कहीं जगह देनी ज़रूरी थी। हमारी कॉलोनी से बढ़िया जगह उसे और कोई नहीं मिली। क्योंकि यहां पर लोग प्लॉट लेकर चले गए थे, तो विरोध करने वाला भी कोई नहीं था। मेरे पति कुछ बोलने वाले नहीं। मेरा अकेला स्वर क्या करता? सबसे बड़ी बात यह भी थी कि शुरू-शुरू में कुछ अंदाज़ ही नहीं आया कि कितनी भारी आपदा आने वाली है। वह तो जब इन लोगों ने आकर अपना छप्पर डाल लिया। और जानवर सामने से बांध दिए, तब महसूस हुआ कि इससे तो वह फ्लैट ही अच्छा था।

शुरूआत में चार-छः लोग ही वहां दिखे। लेकिन कुछ दिनों बाद तो एक बरगद का जैसा पेड़ हो गया जिसकी कई शाखाएं थीं। अब इनका परिचय जानना ज़रूरी हो गया था। किससे पूछूं, किसे अपने पास बुलाऊं, मैं थोड़ा दुविधा में पड़ गई थी। मैं अपनी बालकनी से उन लोगों के व्यवहार को परख रही थी। मुझे लगभग तीस साल की एक महिला ही बातचीत के लिए उचित जान पड़ी। मुझे पता चल गया था कि उसका नाम लक्ष्मी है। परिवार के बड़े लोग जो शायद उसके सास-ससुर थे, जो उसे इसी नाम से पुकारते थे। एक दिन उसे अकेला पाकर मैंने आवाज़ दी, 'जब समय हो इधर आना।'

दिन के समय वह मेरे पास आई।

'कुछ कह रही थीं क्या दीदी जी?'

ये सुनते ही मुझे विदेश में रहने वाली अपनी एकमात्र बहन याद आ गई। जो अपने बातचीत के तरीक़े और पहनावे से हॉलीवुड फ़िल्म की किसी नायिका से कम नहीं लगती। फिर अपने कश्मीर वाले जेठ जी के ऑर्डरली के मुंह से अपनी जेठानी को जब मैमसाब-मैमसाब पुकारते सुनती थी, तो मन में एक कसक सी होती थी।

हिचकने से काम नहीं चलेगा। पहली बार में ही सचेत कर देना होगा, सोचकर मैंने उसे कहा, 'अरे! तूने ये दीदी जी का रिश्ता कैसे जोड़ लिया? अभी तक जितनी भी काम वाली आईं, सभी मैमसाब कहती थीं।' सहज ही मेरे मुंह से निकल पड़ा।

वह बहुत ही कोमलता से बोली,'आपको पिछले हफ़्ते भर से देख रही हूं। आपको फोन पर बात करते भी सुनती हूं। न जाने क्यों आप मुझे अच्छी लगीं, तो अपनेपन के मारे दीदी कह दिया। और फिर मैं कोई काम वाली भी नहीं.... पर ठीक है अब से मैमसाब ही कहूंगी।'

अपनी प्रशंसा सुनकर मेरे मन को तसल्ली तो ज़रूर हुई, पर मैंने फीकी मुस्कुराहट दिखा कर मन ही मन कहा कि मुझे इतना अच्छा भी मत समझना कि ऐरे-ग़ैरे की दीदी बन जाऊं।

ख़ैर, उसके परिवार के बारे में जानकारी लेने का मेरा प्राथमिक उद्देश्य पूरा हुआ। अपना स्तर बनाए रखने के लिए मैंने लक्ष्मी से दूरी ही बनाए रखने की कोशिश की। लेकिन यदा-कदा किसी काम के लिए उसकी ज़रूरत पड़ ही जाती। मैंने तय किया कि एक निश्चित दूरी बनाए रखते हुए अपने संकल्प सिद्ध कर लूंगी।

पुराने घर में कुछ कपड़े और सामान अभी रखे हुए थे, जिसे नए घर में लाने का मेरा इरादा नहीं था। मैंने यूं ही लक्ष्मी से पूछ लिया, 'कुछ कपड़े और सामान है। क्या तुम्हारे काम आएगा?'

मेरी सोच के विपरीत उसने तुरंत हां में जवाब नहीं दिया। बड़े इत्मीनान से पूछने लगी कि क्या समान है, किस तरह का समान है? अगर कपड़े पहनने लायक़ होंगे तो बच्चे ज़रूर पहन लेंगे।

ख़ैर, मैंने उसे दो-चार दिन बाद पूछ लेने की बात कह कर विदा कर दिया। इधर अभी बस्ती सुनसान थी। लॉन में काम करने के लिए माली नहीं मिल रहा था। मुझे बस इन्हीं लोगों का सहारा था। और अपने स्वार्थ में वशीभूत होकर मेरा यही सोचना था कि किसी तरह लक्ष्मी को अपने बस में कर लूं। लक्ष्मी अगर पकड़ में आ जाए, तो सब कुछ अपने हाथ में। इसी सोच के तहत मैं बीच-बीच में उससे बात कर लेती। मेरे गेट के सामने से जब भी वह गुज़रती तो रोक कर कुछ देर बात कर लेती। अब तक मैंने पुराने घर से सामान भी मंगा लिया था। और लक्ष्मी को बुलाकर दिखा दिया।एक-दो सामान को छोड़कर वह सभी सामान ले जाने को तैयार थी। मैंने वह अतिरिक्त सामान भी उसे दे दिया कि अपने किसी जान पहचान वाले को दे देना। उससे लॉन में काम करने की बात की तो वह तुरंत राज़ी हो गई, क्योंकि इन दिनों खेतों में ज़्यादा काम नहीं था।

एक दिन मैंने उससे पूछ लिया, 'बर्तन और झाड़ू पोछा का काम करेगी? ज्यादा काम नहीं है। बस दो ही लोग परमानेंट रहने वाले हैं घर में हैं। उस पर भी साहब अधिकतर समय बिज़नेस के काम से शहर से बाहर रहते हैं।'

उसने साफ़ मना कर दिया, 'बाहर के छोटे-मोटे काम करा लो लेकिन घर के काम करने से हमारे आदमी मना करते हैं।'

ख़ैर कुछ समय बाद मेरा इंतजाम हो गया था। लक्ष्मी की ज़रूरत कम हो गई थी, मगर उससे समय-समय पर बात होती रहती। यूं तो अनपढ़ थी, पर अपने बच्चों को आगे बढ़ाने की बहुत लालसा थी उसके अंदर। तीन बच्चे थे, दो बेटियां

एक बेटा। मैंने उससे कह दिया था अब बस करना। तीन बच्चे काफ़ी हैं। इन्हीं को अच्छी तरह से पढ़ा-लिखा कर अपना कर्तव्य निभा। उसने भी मेरी बात का समर्थन किया। कॉपी-किताब, पेंसिल का इंतज़ाम कर उसके बच्चों को पढ़ने लिखने में यथासंभव मदद मैं करने लगी थी। महिला का ससुर लगभग पचपन साल का वृद्ध होगा, जो पैंसठ से कम नहीं लगता था। मेहनत मज़दूरी और पौष्टिक खानपान का अभाव इंसान को उम्र से पहले ही बूढ़ा बना देता है।

एक दिन लक्ष्मी आई थी। लॉन में खाद डालते हुए उसने बताया, 'छोटी सी उम्र में शादी हो गई थी, क्योंकि गॉव में पढ़ाई-लिखाई का तो कोई मतलब ही नहीं होता है। लड़की हो तो उसकी शादी कर दी जाती है। और अगर लड़का हो तो वह खेतों में काम या दूसरी मज़दूरी करता है। अब लगता है कि थोड़ा बहुत पढ़ना लिखना ज़रूरी है।'

'तो क्या तू स्कूल जाएगी?' मैं हँसी।

'दीदी .....जी,' कहते-कहते वह संभल गई। 'मैमसाब, अब तो मेरे बच्चे स्कूल जाने की उम्र के हो गए हैं। मैं क्या स्कूल जाऊंगी पर आप मुझे थोड़ा टैम देकर अगर कुछ पढ़ा दिया करो तो ?' इतना कहकर उसकी आशावादी नज़रें मुझे देखने लगी।

'ठीक है आ जाया कर मेरे पास। थोड़ा काम कर लेगी और बदले में मैं तुझे पढ़ा दूँगी पर यह दीदी-दीदी न बोल। मैमसाब कहा कर।'

वह हल्का सा मुस्कुरा कर अपने दांतों तले जीभ दबाने लगती।

मुफ़्त में कौन किसकी सेवा करता है आजकल। और मैं उससे कौन सा ट्यूशन फीस ले रही थी। मुझे भी बाहर के छोटे-मोटे कामों के लिए एक सहायक की ज़रूरत थी जो लक्ष्मी पूरा कर देती और बदले में मैं उसे पढ़ाने लगी थी। थोड़ा बहुत पढ़ने लिखने के ज्ञान के बाद मैंने उससे कहा,'बीए-एमए तो तू कर नहीं पाएगी, जितना अक्षर ज्ञान हो गया, काफी है।'

फिर क्या पता कल पढ़-लिखकर मेरी ही बराबरी करने लगे। यह सोचकर पीछा छुड़वा लिया।

एक दिन लक्ष्मी मेरे पास बड़े स्क्रीन का एक मोबाइल लेकर आई, और कहने लगी कि मैमसाब इसे चालू कर दीजिए। इस परिवार के प्रति जो अनमना सा भाव मेरे अंदर था वह अब धीरे-धीरे क्षीण होने लगा था। मैंने उसमें सिम चैक करते हुए उसे एक्टिवेट कर दिया। साथ में उसके दो बच्चे भी आए थे, जो बहुत ही ग़ौर से सब कुछ देख रहे थे।

'अब मैं रोज़ आपके पास आऊंगी मोबाइल की क्लास लेने।'

मेरे व्यवहार में नरमी देखकर उसके बात करने की हिम्मत थोड़ी बढ़ रही थी। जो बात मुझे बेचैन भी करती थी।

'मतलब, मोबाइल की क्या क्लास लेनी? फोन ही तो करेगी ना तू इसमें और क्या करेगी?'

'और भी बहुत सारी चीज़ें होती हैं। आपको तो पता ही है।'

मोबाइल का ज़्यादा उपयोग मुझे हमेशा परेशान करता था। मैंने उससे कह दिया कि तेरे पति को भी तो आता होगा मोबाइल चलाना, उससे पूछना। पति से पूछने की ज़्यादा इच्छुक वह नहीं लग रही थी।

एक दिन अचानक मैं देखती हूं कि लक्ष्मी के दोनों बड़े बच्चों के हाथ में भी एक मोबाइल है। इस बीच मेरे पास आना भी कम कर दिया था उसने। शायद बच्चे उसके मोबाइल ट्यूटर का काम कर रहे थे। दरअसल लक्ष्मी को मोबाइल में रील बनाने का चस्का चढ़ गया था। पति को पता चलने पर शायद ख़ूब पिटाई हुई थी उसकी। उसने मुझे बताया तो नहीं, पर पिछली रात घर में हलचल देखकर पता चल गया था कि कोई भूचाल आया था। दोपहर के समय मैंने इशारा करके लक्ष्मी को बुलाया। उदास चेहरा लेकर वह आई। रात को हल्ले की वजह पूछने पर उसने मुझसे बात को छुपाना चाहा, लेकिन वह भी समझ गई थी कि मुझसे कुछ भी छुपाना इतना आसान नहीं। उसने मुझे सच्चाई बता दी।

'लक्ष्मी ! ये रील्स के चक्कर में क्यों अपनी ज़िंदगी बर्बाद करती है तू?'

यक़ीनन, लक्ष्मी को सोशल मीडिया का चस्का लग गया था। तीन गायों में से अब एक ही गाय उसके पास रह गई थी। प्लॉटिंग होने लगी थी। खेती की ज़मीन भी कम हो गई थी। स्वाभाविक है कि काम भी कम हो गया था। ऐसे में इंसान इधर-उधर मनोरंजन ढूंढता है। और लक्ष्मी को मोबाइल फोन के अंदर एक कौतूहल भरी दुनिया मिल गई थी। मुझे एक बारगी महसूस हुआ कि लक्ष्मी को बचाना मेरी ज़िम्मेदारी है।

मैं दोपहर की गुनगुनी धूप का आनंद ले रही थी, अचानक लक्ष्मी प्रकट हो गई। घर के अंदर तो वह नहीं आती थी लेकिन मुझसे बात करने का कोई भी मौक़ा चूकती नहीं थी। वह ऐसे अवसरों की तलाश में रहती थी कि जब मैं घर के बाहर के हिस्से में दिखाई दूं। किसी न किसी बहाने से वह पहुंच जाती थी।

आते ही बोली, 'मैमसाब, बच्चों के स्कूल जाने के बाद थोड़ा टैम बच जाता है। कोई ऐसा

काम बताओ जो मैं सीख लूं, जिसमें कमाई भी हो जाए। मोबाइल पकड़ने की ग़लती अब कभी नहीं करूंगी।'

उसके चेहरे पर एक उम्मीद, आत्मविश्वास और अपराध बोध का भाव साथ-साथ झलक रहा था। कल रात मैं उसी के बारे में सोच रही थी कि मुझे पढ़ा-लिखा जानकर लक्ष्मी बड़ी उम्मीद लेकर मेरे पास आती है, और मैं कई बार उसे निराश कर देती हूं। हृदय परिवर्तन के दौर से गुज़रते हुए मैंने महसूस किया कि अगर अपने से कमतर महिलाओं को आगे बढ़ाने में मैं मदद ना करूं तो मेरी पढ़ाई-लिखाई और समझदारी किस काम की?

अंदर से आवाज़ आई कि लक्ष्मी तुम्हारी इतनी मददगार है, तुम भी उसकी मदद करो। कुछ सोच कर मैं बोल पड़ी, 'अगर समय है तो सिलाई कढ़ाई का कोई काम सीख ले।'

उसे मेरी बात अच्छी लगी पर घर से बाहर जाने का समय नहीं था। सारा काम खाना पकाने, खेतों में काम करने और बच्चों और लंबे चौड़े परिवार के पीछे ही चला जाता। हां, उसके पति ने ज़रूर पेंट करने की ट्रेनिंग ले ली थी। किसी ठेकेदार के संग अब वह घरों में पेंट करने लगा था। लक्ष्मी ने एक गाय और ख़रीद ली थी। जिस्-का दूध वह दूर-दूर देकर आती। इस बीच मैंने कुछ सालों पहले ख़रीदी अपनी सिलाई मशीन जो कि एक कोने पर उपेक्षित पड़ी थी, लक्ष्मी को दे दी। जिस पर वह खटर-पटर करने लगी थी। स्वाभाविक है कि मेहनत पैसा खींचती है। लक्ष्मी के परिवार में सब कुछ अच्छा चल रहा था। लक्ष्मी की सफल गृहस्थी देखकर तरह-तरह के विचार मन में आते। कभी-कभी थोड़ी सी कुढ़न भी होने लगती क्योंकि मेरे घर के बाहर काम करने के लिए अब उसके पास ज़्यादा समय नहीं था। इंसान का मन भावनाओं का ताना-बाना ही तो है।

मेरे पति अपने बिज़नेस में व्यस्त रहते। कई-कई दिनों उन्हें शहर से बाहर रहना होता। इस बीच मैं कुछ कमज़ोरी सी महसूस करने लगी थी और अचानक बहुत ज़्यादा ही बीमार पड़ गई। हाथ पैर काम नहीं कर रहे थे। अपंगता की सी हालत में आ गई थी। कामवाली ने कहीं और काम पकड़ लिया था। विदेश में बसे दोनों बेटों और हॉलीवुड नायिका सरीखी अपनी बहन को भी अपनी हालत बताई, लेकिन इन सभी ने अपने दूर होने का वास्ता देकर मेरी किसी भी तरह मदद करने में लाचारी व्यक्त कर दी। बस कभी-कभी वीडियो कॉल के माध्यम से मेरी सुध ले कर अपने कर्तव्यों की इतिश्री कर लेते। ऐसे में लक्ष्मी ही मेरे काम आई। अब उसकी पहुंच मेरी रसोई तक हो गई थी। मुझे और पति को खाना बना कर खिलाना और मेरे कपड़े बदलने में मदद करना, सब कुछ लक्ष्मी के ज़िम्मे था, जिसे वह बख़ूबी निभा रही थी। उसमें मुझे एक बेटी, एक छोटी बहन का अक्स दिखाई देने लगा था। उसकी मैमसाब बनकर रहना मुझे क़तई गंवारा नहीं था। स्वार्थ इंसान से क्या-क्या नहीं कराता? मैं दुनियादारी के बारे में सोच ही रही थी कि अचानक लक्ष्मी का स्वर सुनाई दिया, 'मैमसाब, दाल कौन सी बनाऊं?'

मेरी तंद्रा टूटी और मैं चिल्लायी , 'मैमसाब नहीं। दीदी बोल दीदी !'

मेरी चीख के विपरीत रसोई घर से एक बहुत ही प्यारी सी खिलखिलाहट गूंजी, 'मैमसाब में वो अपनापन कहां, जो दीदी कहने में है। तभी तो दीदी कहा था पहली बार।'

मुस्कुराते हुए वह मेरे कमरे की तरफ़ आई। 'पगली ! जब प्रेम की पोटली जब खुली ही नहीं थी तो प्रेम दिखाई कैसे देता ?' मैं सिसक उठी।

पोटली खुल गई थी। चार ऑंखें नम थीं। हृदय रूपी पोटली से प्रेम निर्बाध बरस रहा था। प्रेम की गाढ़ी चाशनी टपक रही थी टप टप टप.....●

हल्द्वानी, नैनीताल पिन- 263139

विगत 23 वर्षों से देशहित में समाज-निर्माण के संकल्प के साथ

न हम डरते है न डराते हैं
हम देशप्रेम की भावना जगाते हैं

अगर आप में है जोश और
देश से प्यार

तो आइए दिल्ली से प्रकाशित
राष्ट्रीय पाक्षिक पत्रिका
दूसरा मत
के साथ

अगर शिक्षक, प्रोफेसर, इंजीनियर और डॉक्टर बनते हो तो हमेशा एक ही काम करोगे लेकिन पत्रकार बनते हो तो दुनिया समझने को मिलेगी, दुनिया समझाने को मिलेगी। दुनिया को पढ़ने का मौक़ा मिलेगा, दुनिया को पढ़ाने का मौक़ा मिलेगा

हम आपके हाथ में देते हैं क़लम
समाज-निर्माण की ताक़त के साथ।

योग्यता
खबरों की समझ
और देश के साथ
सच्ची प्रेम-भावना

सोचो, समझो और दूसरा मत से जुड़ो

संपर्क : +91-9643709089

नवरात्र की
हार्दिक
शुभकामनाएं
45
YEARS OF
EXCELLENCE
!! RADHA SOAMI JI !!
Kasturi Jewellers®
SINCE 1978
100% HALLMARK JEWELLERY SHOWROOM
#GOLD #DIAMOND JEWELLERY #SOLITAIRES
100% Lifetime Maintenance Free
100% Buy Back Diamond Jewellery
100% Certified Diamond Jewellery
Shop No. 15, 16, 17, 18, SDM Market, Mangal Bazar Road, Uttam Nagar, New Delhi-110 059
Shop No. 54-55, Main Pankha Road, Opp. Sagar Pur Police Station, New Delhi-110 046
Kasturi Lal Ph. 98186 09444 | Manish (Monu) Ph. 98186 11313

दूसरा मत का साहित्य के प्रति बेजोड़ समर्पण

दूसरा मत साहित्य के प्रति अपनी आस्थावान ऊर्जा को नित्य नूतन सामर्थ्य प्रदान करता रहता है। इसने साहित्य के विभिन्न विधाओं के प्रति अपनी समग्रता और समर्थता समय-समय पर दिखाई है। 2025 का साहित्य-विशेषांक अपने आप में एक बेहतरीन उदाहरण के तौर पर सामने है। घोषणा के अनुरूप इसका ग़ज़ल विशेशांक भी मई प्रथम, 2025 के अंक में ही परिपूर्ण रूप से आ रहा है। वास्तव में साहित्य समाज का दर्पण होता है। यही वजह है कि जब-जब राजनीति लड़खड़ाती रही, अपने पूर्वज साहित्यकारों ने उस लड़खड़ाती हुई राजनीति को क़ायदे से संभाला है। उसे दिशा और दशा देनी की अविस्मरणीय एवं अनुकरणीय भूमिका निभाई। लेकिन इधर साहित्य ख़ुद लड़खड़ाता हुआ नज़र आ रहा है। और राजनीति तो सियासत की सनक में कीचड़ की बदबू से गमक रही है। सियासत की इस सड़ांध से तब तक निज़ात नहीं मिल सकती, जब तक साहित्य अपने पूर्वजों की तरह लड़खड़ाती हुई राजनीति को सहारा देकर थामने की अपने अंदर क़ूवत न पैदा कर ले। और ख़ुद को ख़ुद से संभालने की अपने अंदर ताब न पैदा कर ले। सियासत को संभालने के लिए कॉरपोरेट भी हैं। राजघराने भी हैं। और समाज भी है। लेकिन साहित्य को ऑक्सीजन देने वाला कोई नहीं। यही वजह है कि साहित्य के वेंटीलेटर पर जाने के बाद समाज को भी सहारा देने वाला और उसे संवारने वाला कोई नहीं है। इसलिए साहित्य को वेंटीलेटर से अब बाहर निकलना होगा। उसे अपनी गरिमा को बहाल करना होगा। और सियासत की चाकरी छोड़कर उससे कुछ मांगने और याचना करने की बजाय उसे एक दृष्टिकोण देना होगा। तभी यह देश विश्वगुरु बन सकता है। साहित्यकारों को ठंडे दिमाग़ से अपने गिरेबान में झांकना होगा। उन्हें सत्ता की मलाई से गुरेज़ करना होगा। बहरहाल इस परिस्थिति को बहाल हमसब मिलकर करें। और साहित्य में दिन प्रतिदिन एक ऐसा निखार पैदा करें, ताकि समाज को एक नई सोच और एक नई दिशा मिल सके। दूसरा मत ने साहित्य को परिपूर्णता देने के लिए आठ पेज का अतिरिक्त इज़ाफ़ा किया है। अब दूसरा मत 72 पेज से 80 पेज का हो गया है। आपके लिए एक खुला प्लेटफॉर्म बनकर सामने है। दूसरा मत ने एक प्रण लिया है- साहित्यकारों को पारिश्रमिक देने का। यह सिलसिला चलता रहे, आप भी दुआ करें। इस वर्ष की स्वतंत्रता दिवस से यानी अगस्त सेकेंड, 2025 के अंक से से दूसरा मत में प्रकाशित साहित्य के लिए एक मानदेय तय किया गया है।